राजस्थानी विवाह







राधेश्याम त्रिपाठी



राजस्थानी विवाह



राधेश्याम त्रिपाठी

भूमिका

डा. सत्येन्द्र



अर्चना प्रकाशन, अजमेर

अर्चना प्रकाशन का उन्नीसवाँ पुष्प



राजस्थानी विवाह



रचनाकार :
प्रो० राधेश्याम त्रिपाठी
हिन्दी विभागाध्यक्ष
राजकीय महाविद्यालय, अजमेर



प्रथम संस्करण १९७२



मूल्य-तीन रुपये पचास पैसे मात्र



प्रकाशक :
अर्चना प्रकाशन
१, मेहराहाउस कालाबाग, अजमेर (राज.)



अक्षरसंधान :
अर्चना प्रकाशन, अजमेर



मुद्रक :
जॉब प्रिण्टिग प्रेस, अजमेर

भूमिका

—डॉ० सत्येन्द्र

लोक-साहित्य का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंश है, आनुष्ठानिक वाणी-विलास। प्रत्येक लोकानुष्ठान का जीवन की गहराइयों से संबंध है क्योंकि अनुष्ठान की समस्त प्रक्रिया एक टोने के रूप में प्रस्तुत होती है। इसकी सविधि सम्पन्नता से जीवन की सफलता लोक-मानस में फलती है। अनुष्ठानों के तत्वों में मूल आदिम मानस व्याप्त रहता है, अतः नृतत्व-विज्ञान की दृष्टि से भी उनका बहुत महत्व हो जाता है। यह आनुष्ठानिक क्षेत्र लोक-जीवन का अत्यन्त विस्तृत क्षेत्र है। इसमें यथा संभव किसी बाहरी हस्तक्षेप को स्थान नहीं मिल पाता। यही कारण है कि लोक के मूलस्वरूप को हृदयंगम करने के लिये जितना आनुष्ठानिक वार्ता पर निर्भर किया जा सकता है उतना किसी अन्य वार्ता पर नहीं। अतः ऐसा प्रत्येक प्रयत्न अभिनंदनीय माना जायगा जो उस साहित्य या वाणी-विलास को संग्रह करके प्रकाश में लाता है। जिसमें आनुष्ठानिक पक्ष की प्रधानता है। प्रो० राधेश्याम त्रिपाठी का यह प्रस्तुत उद्योग इसीलिए श्लाघनीय है।

विवाह मानव-जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटना है। यह एक नहीं, अनेकानेक अनुष्ठानों से बुना गया संस्कार है। इस संस्कार के लिए जीवन-धारा के लोक-वेद परक दोनों ही किनारे व्यग्र दिखायी पड़ते हैं। धर्मशास्त्र तथा वैदिक प्रणाली में भी विवाह संस्कार एक अनोखा स्थान रखता है। लोक का मेधावी पक्ष इसे धर्म तथा अध्यात्म और

नैतिक आदर्श तथा सामाजिक सौकर्य की दृष्टि से यज्ञादिक अनुष्ठानों से सम्पन्न कराता है, और समस्त व्यापार एक उच्च मनीषिता और और दार्शनिकता से संप्रेरित रहता है; किन्तु लोक-पक्ष उन तत्त्वों की स्थापना और संपादना में व्यस्त रहता है, जिनका कोई शास्त्र नहीं होता, केवल परम्परा रहती है, वह परम्परा ही उनका शास्त्र है; उसका पालन अत्यन्त तत्परता से ऐसे किया जाता है, मानों जीवन की नींव के मजबूत पत्थर रखे जा रहे हैं। इस दृष्टि से इस संस्कार के ये लोक पक्ष विषयक आनुष्ठानिक कृत्यों को भी देखना होता है, और उसके साथ वाणी-पक्ष को भी। यह वाणी-पक्ष वैवाहिक गीतों का रूप ग्रहण कर लेता है। ये गीत क्या हैं, वस्तुतः विवाह विषयक लोक-मंत्र हैं।

श्री प्रो॰ त्रिपाठीजी ने ऐसे ही राजस्थान के विवाह-गीतों का यह संकलन प्रस्तुत किया है, और उसके साथ एक तद्विषयक ज्ञानवर्द्धक शास्त्रीय व लौकिक विवेचन युक्त भूमिका भी साथ में दी है। यह उन्होंने अभिनंदनीय कार्य किया है। हिन्दी में इसी प्रकार के प्रत्येक क्षेत्र के संकलनों की आवश्यकता है। ऐसे संकलनों की समस्त भारत व्यापी सामग्री से ही विवाह-संस्कार विषयक भारतीय लोकतत्व प्रकाश में आ सकते हैं और उनसे हमें अनेक सांस्कृतिक और सामाजिक समस्याओं के स्वरूप और मूल का पता चल सकता है।

लोक-साहित्य यों भी अत्यन्त आकर्षक, जीवन्त और शक्ति सम्पन्न होता है। प्रो॰ त्रिपाठी जी के इस संकलन का मैं समझता हूँ अवश्य ही स्वागत होगा।

५ दिसम्बर १९५९



अपनी बात

लोकगीत देश की आत्मा के परिचायक होते हैं। लोक गीतों में मानव अपने हृदय की निश्छल अनुभूति को वाणी देता है। लोकगीतों की रचना स्वतः होती है, इसके लिए साहित्यिक गीतों की भाँति कलात्मक-साधना नहीं करनी पड़ती। इन गीतों में जीवन की विविधतायें परिलक्षित होती हैं। लोकगीतों का भण्डार अक्षय है और इनकी परम्परा भी उतनी ही प्राचीन है जितनी मानव की संस्कृति और सभ्यता। लोकगीतों में जीवन की सरसता परिव्याप्त रहती है जिसके द्वारा मनुष्य अपने हृदय के रागात्मक भावों को मूर्त रूप देने में समर्थ होता है।

राजस्थान में गाये जाने वाले लोक-गीत भी मानव हृदय की रागात्मक अनुभूति के सजीव चित्र हैं। राजस्थानी लोक गीतों की विविधता, उसके विभिन्न संस्कारों, पर्वों, त्यौहारों, ऋतुओं एवं व्रतों के के माध्यम से दृष्टिगत होती है। मनुष्य उत्पन्न होने से लेकर मृत्यु पर्यन्त इन लोक-गीतों की भाव-रेखाओं से बंधा रहता है। ये गीत जन-मानस के समवेत स्वर को वायुमंडल में गुंजाने में समर्थ होते हैं। इनमें लोक-गंगा के हृदय का कलकल निनाद मुखरित रहता है। यही कारण है कि पीढी दर पीढ़ी मौखिक परम्परा से जीवित रहते हुए भी इन लोक गीतों की आत्मा अजर अमर है और रहेगी, भले ही इनका बाह्य आवरण भाषा एवं युग के बदलते परिवेश के कारण भिन्न प्रतीत होता हो। इसी से इन गीतों में सर्व सामान्य के स्फूर्तिमय उद्गारों की चेतना विद्यमान है।

लोक-गीतों में भारतीय संस्कृति की एकरूपता दिखाई देती है। भारतीय संस्कृति वैदिक अनुष्ठानों की पोषिका रही है। वैदिक कर्म काण्ड और अनुष्ठानों के प्रयोग द्वारा अमंगलजनक प्रभावों के दूर करने और मांगलिक विधान रचने का प्रयत्न चलता रहा। मानव जीवन के

विभिन्न अवसरों पर इनका प्रभाव आज भी परम्परा के रूप में शास्त्र सम्मत व लोक सम्मत स्वरूप लिए विद्यमान है।

संस्कार मनुष्य जीवन के परिष्कार और शुद्धीकरण के मध्यम बने। धार्मिक विधि-विधानों से युक्त संस्कार शास्त्रीय एवं लौकिक पक्षों को उजागर करने में सक्षम रहे हैं। संस्कारजन्य शास्त्रीय विधान के साथ लोक-विधान भी कम महत्वपूर्ण नहीं रहा है। उनका विशेष पक्ष विविध संस्कारों पर विविध प्रकार के लोक-गीतों द्वारा प्रतिफलित हुआ है। भारतीय धर्म शास्त्रों में वैसे शोडष संस्कारों को मान्यता दी गई है किन्तु लोक-जीवन प्रमुख रूप से तीन सस्कारो को ही सर्वोपरि मानने लगा—१. जन्म २. विवाह ३. मृत्यु। मनुष्य जीवन में विवाह संस्कार सर्वोपरि व मंगलमय संस्कार माना गया है। विवाह संस्कार में जहाँ शास्त्रीय प्रणाली मान्य है, वहीं लोक-रीति भी सर्वमान्य है। लोक संस्कार और शास्त्रीय संस्कार दोनों का सम्मिलन आज की विवाह प्रणाली में देखा जा सकता है। लोक संस्कारों का प्राण-तत्व लोक-गीत ही होते हैं। विवाह के अवसर पर विविध प्रकार के रीति-रिवाजों को पूर्णता प्रदान करने में लोक-गीतों का प्रमुख हाथ रहता है। भूत, भविष्य और वर्तमान की मंगल कामनाओं का स्तवन इन्हीं गीतों में समाहित है।

राजस्थान की धरतो लोक-गीतों की धरती है। राजस्थानी लोक-गीत अपने वैविध्य और व्यापकता के लिए प्रसिद्ध हैं। पारिवारिक परम्पराएँ और रीति-रिवाज इन लोक-गीतों में साकार हो उठे हैं।

विवाह के लोक-गीत एक प्रकार से हमारे सामाजिक जीवन के संस्कारगीत हैं। ये संस्कार-गीत हमारी संस्कृति की आधार-शिला हैं। अतः इन गीतों का महत्व किसी भी प्रकार से कम नहीं है। राजस्थान की संस्कृति के दर्शन विवाह के संस्कारगीतों में होते हैं। वस्तुतः इन गीतों की उपयोगिता मानवीय संवेदनाओं से जुड़ी हुई है।

विवाहगीत में देवी देवताओं के गीत, पीठी के गीत, बन्ना-बन्नी, सेवरो, घोड़ी, भात, मायरा, तोरण, सप्तपदी, गाल्यां-गीत, बधावा, जवाईं, विदागीत आदि सम्मिलित हैं।

राजस्थान के लोक-गीतों की इस निधि को एकत्र करने का कार्य मैंने सन् १६५० मे प्रारम्भ किया था। अनेक परिचित व अपरिचित महिलाओं से सम्पर्क साधकर लोक-गीतों को एकत्र करना पड़ा। सन् १६५५ में 'राजस्थानी विवाह-गीत एक अध्ययन' शोर्षक से इस कृति का निर्माण हुआ। वर्षों बाद आज यह कृति पुस्तकाकार में आपके हाथों में है। सन् १६५८ में भी इसके प्रकाशन की व्यवस्था की गई थी, किन्तु किसी कारण यह कार्य अपूर्ण ही रहा और अन्त में भाई डा० बद्रीप्रसाद पंचोली के सतत प्रयासों से यह पुस्तक आज प्रकाश में आई है।

विवाह-गीतों और तत्संबंधी लोक-प्रथाओं के अध्ययन की दिशा मुझे मेरी माताजी की अनुकम्पा और आशीर्वाद से मिली है। बाल्यावस्था से ही मैं अपनी माताजी द्वारा गाये जाने वाले भक्ति संबंधी लोकगीतों को सुनता रहा हूँ और उससे प्रेरणा पाता रहा हूँ। अतएव यह कृति माताश्री को ही समर्पित करता हूँ। उनके आशीर्वाद की आकांक्षा रखना मेरे लिए स्वाभाविक ही है। इन गीतों के संकलन में जिन महिलाओं ने व मित्रों की पत्नियों ने सहयोग दिया है, उनके प्रति मैं हृदय से आभारी हूँ। मुझे आशा है कि यह पुस्तक राजस्थान की जनता तथा दूसरे प्रान्तों के लोक-गीत प्रेमी भाई-बहिनों के लिए उपयोगी प्रमाणित होगी।

—राधेश्याम त्रिपाठी

शारदी पूर्णिमा सं० २०२६

अनुक्रमणी

समर्पण



ममतामयी माँ को सादर साभार

–राधे



विषय प्रवेश

विवाह : शास्त्रीय दृष्टिकोण

आज जब विवाह की बात कहने बैठा हूँ तो लगता है कि जीवन की उल्लासमयी घड़ियों की अनेक रंगीन रेखाएँ अपने वैभव विलास को लेकर जैसे निखर उठी है। हृदय की यह आतुरता अपनी मौन भाषा की अनबूझ कहानी का भाव लेकर बिखरने लगी है। जीवन के वे मधुर क्षण अपनी कामनाओं की लहरियों से मुखरित होकर पलभर के लिये एक नवीन लोक का सृजन करने को आतुर हैं। सुनता आया हूँ कि विवाह के द्वारा मानव अपने जीवन के एक शुष्क नीरस-पक्ष का परित्याग करके सरस भावभूमि पर पदार्पण करता है। मरुस्थल का शुष्क प्रभंजन हरित् वसुन्धरा की तरलता और स्निग्धता को धारण करता हुआ मलय-मारुत के वेश में शोभित एवं सज्जित होकर जीवन को पुलकित करने की क्षमता रखता है। किशोर युग के अल्हड़ चरण यौवनागमन पर विवाह के पथ पर से गांभीर्य और दायित्व की गति लेकर अग्रसर होते हैं जिनमें समाज के भावों का विकास और निर्माण का संकल्प निहित रहता है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था

भारतीय आचार्य संसार को एक विचित्र रंगस्थली मानते आये हैं। इस रंगस्थली में मानव एक निर्दिष्ट समय तक अपने अभिनय की पूर्ति हेतु अवतरित होता रहता है। मानव अपने सांसारिक जीवन प्रवाह

में नित नवीन कर्म-लहरियों से किलोलें करता है। भविष्य के सुख की मनोहारी कल्पनाओं की रंगीन रेखाएँ विश्व-पटल पर अंकित करता हुआ वह समाज की बहुमुखी चेतना की ओर क्रियाशील होता है। समाज को मैं व्यक्तियों के समूह का एक पक्षीय रूप ही नहीं, मानव मस्तिष्क के विकास और उसकी चेतना का एक सबल साधन भी मानता हूँ। समाज मानव को सशक्त बनाता है। सामाजिक-जीवन व्यक्तिगत उच्छृंखलताओं के विरुद्ध प्रतिक्रिया का वह रूप है जिसमें स्वार्थ को परमार्थ के लिये उत्सर्ग करना होता है। यों भी कहा जा सकता है कि जन-हित की निर्मल राका-रजनी में श्याम मेघ की लहराती घटाओं का दमन करके ज्योत्स्ना के सौंदर्य को जन जीवन के लिये समर्पित करने की उत्कट भाव-धारा को संबल देना होता है। समाज में दूसरे के सुख-दुःख में अपने सुख-दुःख का तथा अन्यान्य आत्माओं में अपनी आत्मा का अनुभव करना सीखा जाता है। इस प्रकार समाज में प्रविष्ट होकर मानव, जीवन के वास्तविक उद्देश्य 'आत्मिक-विकास' की उपलब्धि की ओर अग्रसर होता है। व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के विकास के लिये समाज की बहुमुखी चेतना का अध्ययन करना होता है। सामाजिक अध्येता को समष्टि के हितार्थ जीवन की क्रियाओं को समरूप देकर उसके सत्त्व की कामना करना आवश्यक होता है। समाज और व्यक्ति, व्यक्ति और समाज दोनों का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध माना गया है। साधारणतः समाज व्यवस्था के मूल में एक उच्च आदर्श, पवित्र मंगल भावना, सुखकारी कल्पना तथा भव्य-जीवन-निर्माण की निष्ठा का सन्निवेश है। भारतीय समाज व्यवस्था अपने मूल में इसी प्रकार के उद्देश्य की शीलता से संजीवित रही है, इसमें संदेह नहीं है।

वर्ण व्यवस्था

जीवन की सर्वतोन्मुखी उन्नति की आशा रखने वाले मानव-मस्तिष्क को अपने चरम विकास के लिये कुछ उपयोगी नियमों को निर्मित करना आवश्यक होता है। निर्धारित किये हुए नियम जीवन को निर्दिष्ट पथ पर पहुँचाने के लिये विशेष सहायक होते हैं। उदधि की उत्ताल तरंगावलियों से जूझने के लिये नाविक को नाव और पतवार के साथ ही दिशासूचक यन्त्रज्ञान की आवश्यकता अनुभव होती है। लगता है हमारे पूर्वाचार्यों ने समाज की आध्यात्मिक, नैतिक एवं व्यवहारिक उन्नति के लिये जिन उपयोगी नियमों की रचना की थी उनमें वर्ण-व्यवस्था का अपना विशिष्ट एवं एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। हो सकता है कि आज के अत्यधिक 'सभ्य-जन' इसको तुच्छ दृष्टि से देखकर हास्य की कथावस्तु बनाते हों किन्तु फिर भी निर्विवाद रूप से यह तो स्वीकार करना ही होगा कि इसी की भित्ति पर हिन्दू समाज का वह उच्च प्रासाद अवस्थित है जो युग के कठिन क्रूर शिकंजों के, थपेड़ों को झेलता हुआ भी अब तक अपनी बुलन्दी का दावा कर रहा है। वस्तुतः वर्ण-व्यवस्था ने एक दीर्घकाल तक सामाजिक विकास को अक्षुण्ण बनाये रखने की चेष्टा की है।

चार आश्रम

हमारे प्राचीन मनीषियों ने समाज को सुदृढ़ बनाये रखने के हेतु जीवन को चार आश्रमों में विभक्त किया : ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। मानव की आयु को सौ वर्षों की परिधि में समेटकर प्रत्येक आश्रम को क्रमशः पच्चीस-पच्चीस वर्षों की सीमाओं में आबद्ध किया गया है। अतः चारों आश्रमों के विशद विश्लेषण की ओर न जाकर संक्षेप में इनकी रूपरेखाओं से परिचित होना ही अपेक्षित हैं।

ब्रह्मचर्याश्रम किशोरावस्था से यौवन के संधिकाल तक के पूर्व पच्चीस वर्ष का एक तपोमय जीवनक्रम है। विशेषतया यह व्यक्तिगत स्वार्थ-सिद्धि की स्वाभाविक अवस्था है जिसमें विद्याध्ययन द्वारा ज्ञानोपार्जन किया जाता है जिसके द्वारा मानव के मानसिक विकास का मार्ग प्रशस्त होता है। इस अवस्था में व्यक्ति के अंग-प्रत्यंग पुष्ट होकर शारीरिक विकास होता है। वस्तुतः ब्रह्मचर्य के द्वारा समाज के एक अंग, अपने व्यक्तित्व को दृढ़ एवं पुष्ट किया जाता है। वेद मंत्रों में ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में उत्कृष्ट और भव्य विचार प्रकट किये गये हैं। अथर्ववेद के सूक्त में ब्रह्मचर्य की महिमा का वर्णन इस प्रकार है—

ब्रह्मचारी ब्रह्म भ्राजद् बिभर्त्ति-
तस्मिन् देवा अधि विश्वे समाताः ॥
(अथर्व–११-५-२४)

अर्थात्—ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करने वाला ही प्रकाशमान ज्ञान-विज्ञान को धारण करता है। उसमें मानों समस्त देवता वास करते हैं। यह जीवन-साधना का प्रथम सोपान है जिस पर चरण धर कर मानव गृहस्थ के रथ पर आरुढ़ होता हुआ जीवन के द्वितीय महत्त्वपूर्ण आश्रम में प्रवेश करता है।

ब्रह्मचर्य अवस्था के पूर्ण होने पर हमारे वेद मानव को गृहस्थ होने की अनुमति देते हैं। बालक अपने जीवन के उषाकाल में ही मध्याह्न की प्रखरता का आभास पा लेता है। उषा की लालिमा, यौवनागमन के साथ ही अपना तेजोमय रूप पाकर निखर उठती है जिसकी आभा में दाम्पत्य प्रेम की छटा निखर कर अपने लावण्य को छिटका देती है। गृहस्थाश्रम

इस रूप-लावण्य की शोभा का एक सफल प्रतीक है। विवाह इस आश्रम में प्रवेश पाने का धर्म-विहित सच्चा मार्ग है। विवाह के द्वारा मानव पाशविक भावनाओं से ऊपर उठकर देवत्व के आसन की ओर अग्रसर होता है। कामान्धता के कारण भगिनीत्व तथा मातृत्व तक को विस्मृत कर जाने वाले पशुओं पर यहीं मानव ने विजय-दुन्दुभि का उद्घोष किया है। मानव और पशु का अन्तर इस परीक्षा-द्वार पर आकर स्पष्ट होता है। इसी 'गेह' में मानव को निखिल सृष्टि में 'मानव' के श्रेष्ठ पद की उपलब्धि हुई है। यही कारण है कि विवाह के आदर्श एवं पवित्र बन्धन की श्रेष्ठता पर हमारे धर्मशास्त्रों में उपदेश की विभिन्न रंगीन रेखाएँ खींची गई हैं।

विवाह गृहस्थ जीवन के प्रवेश का प्रथम सोपान है। गृहस्थरूपी रथ में बैठकर मानव अपनी गृहिणी के साथ इहलोक की यात्रा करता हुआ एक अदृश्य शक्ति की इच्छा पूर्ति करता है। गृहस्थाश्रमरूपी रथ के स्त्री-पुरुष दो चक्र है। इस रथ को उचित रूप से गतिशील रखने तथा जीवन के गन्तव्य तक पहुँचने के लिये पूर्वजों ने विवाह-संस्कार को मान्यता दी है। विवाह आत्मोत्सर्ग का श्रेष्ठ साधन स्वीकार किया गया है। मातृत्व की महत्ता और पवित्रता का मंजुल-मोती वैवाहिक सीपी में ही समाया हुआ है। पच्चीस वर्ष ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने के पश्चात्, ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी जब गृहस्थरथ के चक्र बनकर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते थे तब गृहस्थरूपी रथ सुचारु रूप से जीवन की पगडण्डी पर अग्रसर होने में सुगमता पाता था तथा भविष्य में वे सामाजिक जीवन-विधान की परम्परा का सुगमता से पालन करने में समर्थ हो सकते थे।

इसके साथ ही यह भी कह दूं कि प्रकृति स्वयं दो तत्त्वों की एकरूपता तथा उसके संयोग का परिपूर्ण रूप है। संसारिक जीवन के अभिनय में भी दो (द्वि) के बिना कार्य होना सम्भव नहीं है। क्या जड़ और क्या चेतन, स्वयं सृष्टिकर्त्ता को भी म.या (स्त्री) का सहारा लेना पड़ा है। तभी तो माया और ब्रह्म के द्वि रूप की स्वीकारोक्ति में भी वही इष्ट निहित है। नारी की 'आद्या-शक्ति' से विहीन पुरुष अपूर्ण ही रहता है। नारी के संयोग से ही पुरुष पूर्ण पुरुष कहलाने योग्य होता है। नारी रस रूप है तो पुरुष-पुरुषार्थ का निग्रह है। ब्रह्म से स्त्री-पुरुष की उत्पत्ति होने के कारण दोनों एक हैं, अभेद है और जो भेद है, बाह्य है। इन्हीं के एकत्व का परिणाम सृष्टि का यह मूर्त रूप है--

द्विधा कृत्वात्मनो देहमर्धेन पुरुषोऽभवत्।
अर्धेन नारी तस्यां स विराजमसृजत् प्रभुः।

मनु. अ. १ श्लोक ३२

प्रकृति और पुरुष के अनन्य सम्बन्ध का संकेत गीता में भगवान श्री कृष्ण के इस कथन 'विद्ध्यनादी उभावपि' से भी होता है कि उनकी योगमाया भी उन्हीं के समान अनादि है। गृहस्थाश्रम सभी आश्रमों में श्रेष्ठ और पवित्र माना गया है। इस आश्रम में प्रवेश किये बिना मानव अपने ऋण-भार से मुक्त नहीं हो सकता। गृहस्थाश्रम की प्रशंसा स्मृतिकारों ने भी जमकर की है--

यथा वायुं समाश्रित्य वर्त्तन्ते सर्वजन्तवः ।
तथा गृहस्थमाश्रित्य वतन्ते सर्वे आश्रमः ॥
यस्मात् त्रयोऽप्याश्रमिणो ज्ञानेनान्नेन चान्वहम् ।
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्जेष्ठाश्रमो गृही ॥
स संधार्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता ।
सुखं चेहेच्छता नित्यं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः ॥
ऋषयः पितरो देवा भूतान्यतिथयस्तथा ।
आशासते कुटुम्बिभ्यस्तेभ्यः कार्यः विजानता ॥
मनुस्मृति अ. ३ श्लोक ७७-८०

इस प्रकार सर्वत्र सुख का वर्षण करने वाला, यह आश्रम विद्वानों द्वारा अभिवन्दित किया गया है। वस्तुतः गृहस्थ की मनोरम कल्पना भी गृहिणी से ही है। गृहिणी बिना घर कहाँ! एक कवि ने 'बिन घरणी घर भूत का डेरा' कहकर उसकी उपयोगिता को स्वीकार किया है। ऐतरेयारण्यक में लिखा है--

पुरुषो जायां जित्वा कृत्स्नतरामिवात्मानं मन्यते ।

अर्थात् स्त्री के बिना पुरुष के व्यक्तित्व में अधूरापन रहता है। पत्नी को पाकर ही उसमें पूर्णता आती है।

शतपथ-ब्राह्मण के अनुसार स्त्री पुरुष का अर्द्ध भाग होती है। इसलिये जब तक पुरुष स्त्री को नहीं पाता, तब तक उसमें पूर्णता नहीं आती--

अर्धो ह वा एष आत्मनो यज्जाया ।
यावज्जायां न विन्दते असर्वो हि तावद्भवति ॥

अतः स्त्री ही संसार की उत्पत्ति का मूल कारण है। इसी से मानव ने भी मातृशक्ति को विशेष गौरव और महत्त्व

दिया है। यहाँ तक कि जिन महापुरुषों को हम अवतार के रूप में मानते हैं, उनके साथ भी मातृशक्ति को प्रथम स्थान देकर सम्मान से विभूषित करते हैं। यथा: सीताराम, लक्ष्मी-नारायण, राधाकृष्ण आदि।

गृहस्थाश्रम में व्यवहारिक अनुभव होने के पश्चात सन्तानोत्पत्ति तथा सांसारिक सुखों की उपलब्धि के बाद वृद्धावस्था निकट होने पर वानप्रस्थ आश्रम में पदार्पण करके परमार्थ चिंतन अथवा आत्म-कल्याण का अभ्यास किया जाता है। इस आश्रम में देव-भजन तथा आत्मशुद्धि की ओर ध्यान देते हुये शनैः शनैः सांसारिक सम्बन्धों से उदासीन होता हुआ मानव तदुपरान्त अन्तिम संन्यास आश्रम की अवस्था तक पहुँचता है। सन्यास आश्रम में अज्ञान की निवृति और सत्य से प्राप्त परमानन्द की उपलब्धि, इस अनित्य तन की आसक्ति का त्याग, मोक्ष एवं 'भगवदीय' स्वरूप के प्राप्त होने की अवस्था का बोध होता है और मानव अपनी आत्मा को परमात्मतत्व में लीन करके इस लोक की क्रियाओं से मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

इस प्रकार प्राणी नियत समय तक गुरुकुल में ब्रह्मचर्य सुरक्षित रखकर श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु के ही द्वारा ब्रह्म विद्याभ्यास से संन्यास तक मानव जीवन का तथ्य, लक्ष्य, रहस्य आदि का अंकन करके गृहस्थ तथा वानप्रस्थ दोनों ही आश्रमों में एक पथिक की भाँति राजभोगादि-सांसारिक सुख वैभव के अनुभव द्वारा काया को क्षणभंगुर समझकर उनमें लिप्त न होते हुये अपने ध्येय तक पहुँचता है।

विवाह संस्कार

भारतीय दर्शन मानव जीवन के विकास के लिए मानसिक संकल्पों एवं विचारों को प्रधान महत्त्व देता है। भावनाओं के अनुरूप ही कार्यों की रूपरेखा बनती है और इन्हीं को लेकर

शक्तियों का विकास अथवा संकोच होता है। मनुष्य अपने मानस में जिन विचार लहरियों का मंथन करता है उनका रसरूप प्रभाव उसके भावी कार्यक्रम तथा तत्सम्बन्धी सफलताओं पर पड़ता है। प्राचीनकाल में मनोविचारों की यह विकसित योजना संस्कारों के रूप में प्रचलित रही थी। जीवन के विकास की प्रत्येक महत्वपूर्ण अवस्था में संस्कारों के द्वारा किसी व्यक्ति की उन्नति और मंगलकामना की जाती थी। प्रायः सभी संस्कार उत्सव के रूप में सम्पन्न किये जाते थे और उनके द्वारा कुटुम्ब, समाज और देश में आनन्द, उल्लास, हर्ष और पवित्रता की अजस्त्र धारा प्रवाहित होती थी। हमारे यहाँ सामाजिक जीवन को उत्तम बनाने के लिए गर्भाधानादि सोलह संस्कार माने गये हैं जिनमें बारहवाँ विवाह संस्कार है।

जीवन में विवाह का महत्व और उपादेयता

विवाह शब्द 'वि' पूर्वक 'वह' धातु में 'धत्र' प्रत्यय लगाने से बनता है 'वह' धातु का अर्थ है 'वहन करना'। इस प्रकार विवाह शब्द का अर्थ हुआ (वि - आपस में--वह = वहन करना) आपस में मिलकर विधिपूर्वक जीवन का वहन करना। रूढ़ि अर्थों में हिन्दू-समाज की दृष्टि में विवाह का अर्थ है स्त्री-पुरुष का जन्म-जन्मान्तर के लिये एक दूसरे से अनुबन्धित होना। हिन्दू स्त्री एक बार विवाहित होकर जीवन भर विच्छेदित नहीं होती। विवाह नारी और पुरुष का अथवा प्रकृति और पुरुष का गठबन्धन है। विवाह कुल की उन्नति करने वाला शुभ संस्कार है। सूत्रों में एक स्थान पर कहा गया है 'त्रयोवर्ण द्विजातय' संसार में संस्कार के योग्य वर्ण केवल तोन (ब्राह्मण, क्षत्रीय और वैश्य) ही हैं। अतएव

'जन्मना जायते शूद्रः संस्कात्द्विज उच्यते।" अर्थात जन्म से सभी वर्ण-व्यक्ति शूद्र के समान है। संस्कार होने पर द्विजत्व (दूसरा जन्म) धारण होता है। संस्कार विहीन व्यक्ति चाहे वह किसी भी वर्ण से सम्बन्ध रखता हो शूद्र के समान ही उसकी संज्ञा होगी।

इन संस्कारों का ब्रह्मचर्यादि चार आश्रमों से निकट सम्बन्ध है। संस्कारों के पवित्र धागे से मनुष्य में वर्णत्व प्रकाशित होता है। संस्कारी व्यक्ति शरीर पात तक गृहस्थ आश्रम को केवल विषय-भोग के लिये ही ग्रहण नहीं करता वरन् अपने कर्त्तव्य की पूर्ति का साधन समझकर इसके पालन की ओर उन्मुख होता है क्योंकि—

ब्रह्मचर्य्येण ऋषिभ्यः यज्ञेन देवेभ्यः प्रजाया पितृभ्यः ।

अर्थात् जन्म से ही तीनों वर्ण ऋषि, देव, पितर तीनों ऋणों के साथ उत्पन्न होते हैं । इनमें से ऋषि ऋण तो ब्रह्मचर्य परिपक्व होने से ही चुक जाता है शेष दो ऋण चुकाने के हेतु ही व्यक्ति गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है न कि केवल वासनापूर्ति के लिये। शास्त्रों में इन तीनों ऋणों को चुकाना मानवीय धर्म कहा गया है।

विवाह नारीत्व एवं पुरुषत्व के पूर्ण विकास के अनंतर ही होता है। विवाह संस्कार इस जीवन की क्षणिक तृप्ति के लिये नहीं वरन् पुरुष के जीवन में नारी का जीवन, पारस्परिक उभय जीवन का एकत्व सम्पादन ही इसका प्राकृत अर्थ है। सृष्टि परम्परा के द्वारा आत्मतत्व की अमरता को स्थिर रखने के पावन उद्देश्य को लेकर ही विवाह

संस्कार हमारे सनातन समाज में प्रधान संस्कार है। समाज में विवाह 'कामज' नहीं 'योगकर्म' है। नारी और पुरुष का एक दूसरे के हृदय और जीवन के साथ अटूट सम्बन्ध वैसे ही स्थिर रहता है जिस प्रकार दीपक और प्रकाश का। इस सम्बन्ध की प्रक्रया-पद्धति कैसी अनुपम और सात्विक है तथा एक दूसरे का कितना निर्वियोग सम्बन्ध होता है यह इस कथन से जाना जा सकता है--

"द्रग चारों जुग जोय, माँ जोत महिला जलत।"

अर्थात्, चारों युगों में नेत्रों को फैलाकर देखो, मां स्वयं देखती रह जाती है और नारी पति के साथ जल जाती है। यह अकाट्य सम्बन्ध इसका स्पष्ट संकेत है जिसकी लकीरों को युग के कराल हाथ भी मिटाने में असमर्थ रहे हैं। भारतीय विवाह व्यवस्था का यह सुन्दर रूप योग-धर्म की पावन सलिला से मुखरित है। जिसमें अवगाहन कर सनातन हिन्दू धर्म अपनी पवित्रता और सात्विक भावनाओं के रूप को संजोये हुये है। जिस प्रकार जीवन और मृत्यु का अटूट सम्बन्ध है उसी प्रकार भारतीय सामाजिक जीवन में नारी और पुरुष का मिलन विवाह की वेदी पर स्थिर होकर चिता की भस्मी के पश्चात् तक भी अक्षुण्ण और निर्वियोग बना रहता है। अतः यह ठीक है कि कोई भी समाज, विवाह आदर्श की उपेक्षा करके जीवित नहीं रह सकता। इसलिये समाज में विवाह का महत्वपूर्ण स्थान है। विवाहित व्यक्तियों पर ही समाज का उत्तरदायित्वपूर्ण भार माना जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी क्योंकि इसी के द्वारा समाज की भावी सन्तान पालित-पोषित होती है। इसी की आधारशिला पर वानप्रस्थ व संन्यास की सीमा रेखा खींची जा सकती है। समाज की

उन्नति, अवनति, उसका सशक्त व निशक्त होना केवल वैवाहिक आदर्श पर निर्भर है। अतः सामाजिक जीवन में विवाह की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

यजुर्वेद और ब्राह्मण ग्रन्थों में विवाह के विकास का आभास हमें मिलता है। मनुस्मृति के अनुसार विवाह-संस्कार सबसे प्रधान माना गया है क्योंकि इसका सम्बन्ध न केवल पति और पत्नी से है किन्तु भावी सन्तान से भी है। यहीं पर वर्तमान और भविष्यत् की सन्धि होती है इसी घटना के ऊपर पारिवारिक और सामाजिक सुख अवलम्बित है। यही कर्म और धर्म का उद्गम है। यह संस्कार सबसे पहले इस बात की ओर ध्यान दिलाता है कि विवाह शारीरिक आकर्षण और राग का परिपाक नहीं है किन्तु एक धार्मिक बन्धन है। इसका विच्छेद हम व्यक्तिगत असुविधा से नहीं कर सकते, अपितु इसका निर्वाह आजीवन नियम और निष्ठा के साथ करना होगा। इस प्रकार वेदों, धर्म-ग्रन्थों और कर्म-काण्डों में विवाह को प्रमुख एवं विशिष्ट स्थान प्राप्त है। आर्ष-ग्रन्थों ने विवाह को जीवन का एक अनिवार्य अंग माना है। ब्राह्मण ग्रन्थों में दूसरे महायज्ञ से सुख सम्पादन की सौम्य विधि की रूप-रेखा चित्रित कर उसके स्वरूप का विशद वर्णन किया गया है। स्मृतिकारों ने विवाह को एक धार्मिक-संस्कार माना है जिस पर धर्म, कर्म और समाज की शान्ति निर्भर है। इहलौकिक और पारलौकिक जीवन की सफलता व असफलता भी इसी पर निर्भर है।

विवाहों के प्रकार

विवाह-संस्कार की इस महत्त्वपूर्ण परम्परा को स्वीकार करते हुये मनु ने मनुस्मृति अध्याय ३ श्लोक २१ में आठ प्रकार के विवाहों का सम्मत स्वरूप निर्धारित किया है—

ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधम।

अर्थात्, १. ब्राह्म, २. दैव, ३. आर्ष, ४. प्राजापत्य, ५. असुर, ६. गंधर्व, ७. राक्षस, ८. पैशाच।

१. ब्राह्म विवाह--विद्या युक्त, शीलवान, कुलवान वर को आमन्त्रित करके उसे वस्त्राभूषणों से अलंकृत कर 'कन्यादान' करने को मनु 'ब्राह्म विवाह' कहते हैं। इसमें कन्या का पिता स्वेच्छा से सहर्ष 'कन्यादान' वर को करता है।

२. दैव विवाह-यज्ञ में भली प्रकार वेदोक्त रीति से धर्मलाभ हेतु यज्ञ करने वाले ऋत्विज वर को अलंकारों से सुसज्जित करके कन्यादान करने को 'दैव-विवाह' कहा गया है।

३. आर्ष विवाह--एक गौ अथवा दो गौ अथवा गौ युग्म द्वारा यज्ञादि की सिद्धि के लिये कन्यादान शास्त्रानुसार वर को प्रदान करे। उसकी संज्ञा 'आर्ष-विवाह' है जिसमें कन्या का पिता, 'तुम दोनों धर्म सहित आचरण करो' कहकर कन्यादान करता है।

४. प्राजापत्य विवाह--कन्यादान के समय वर वाणी से प्रार्थना करता है तथा उसकी प्रार्थना स्वीकार करके जो 'कन्यादान' किया जाता है वह 'प्राजापत्य-विवाह' कहलाता है।

५. असुर विवाह--कन्या, वर अथवा उसके माता-पिता द्वारा क्रय करके ग्रहण कर ली जाती है। यह विशेषकर वैश्य वर्ग और शूद्रों के लिये ही विहित माना गया है अतः शक्ति और अर्थ के द्वारा कन्या का ग्रहण करना 'असुर विवाह' है। (मनु ३/२४)

६. गन्धर्व विवाह—ऐसा माना गया है कि गन्धर्व विलास

प्रिय अधिक होते हैं। अतः कन्या और वर की कामवासना हेतु यह 'कामज-विवाह' वर-वधू की इच्छा शक्ति से गुप्त रूप से सम्पन्न होता है। इसमें माता-पिता की अनुमति का कोई महत्त्व नहीं होता है। विशेषकर क्षत्रियों में। 'दुष्यन्त-शकुन्तला' का विवाह इसी कोटि का था। वैध-संस्कार सम्पन्न हो जाने के पश्चात 'गन्धर्व विवाह' श्रेष्ठ कहा जा सकता है।

७. राक्षस विवाह--वर का अपनी इच्छा के अनुसार बलपूर्वक कन्या की इच्छा के विपरीत आपत्तिकर्त्ता को मारकाट कर विवाह करना ही 'राक्षस-विवाह' कहलाता है।

८. पैशाच विवाह--चौर कर्म से कन्या का बलपूर्वक अपहरण, नारी को एकान्त स्थान में नशीली वस्तु के प्रयोग से बेहोश करके तथा अत्यन्त नीच व्यवहार से नारी का उपभोग करना 'पैशाच विवाह' है इसमें उपभोग मात्र उद्देश्य माना गया है। पैशाच-विवाह चारों वर्णों के लिये वर्जित है।

उपर्युक्त विवाहों में केवल प्रथम चार विवाह ब्राह्म, दैव, आर्ष, तथा प्राजापत्य ही व्यवहृत एवं धर्म सम्मत बतलाये गये हैं। याज्ञवल्क्य, विष्णु तथा सांख्य स्मृतियों में भी ये चार विवाह ही ग्राह्य हैं। हारीत स्मृति में केवल 'ब्राह्म-विवाह' ही उचित कहा गया है। इसी प्रकार अन्य चार असुर, गन्धर्व, राक्षस तथा पैशाच अव्यवहृत एवं अधर्म सम्मत है। कालिदास ने 'रघुवंश महाकाव्य' में स्वयंवर-विवाह को उचित और वैध माना है। जिसकी पुष्टि इन्दुमती के स्वयंवर से प्राप्त होती है। स्वयंवर में कन्या का पिता अथवा भ्राता अन्य देशों के युवराजों को निमन्त्रण-पत्र भेज देता था। राजागण अपनी सेनाओं और शिविरों सहित स्वयंवर के लिये प्रस्थान करते थे। कन्या का पिता अपने नगर द्वार पर इनका स्वागत करके

अपने प्रासाद में लेजाकर उनके निवास की यथोचित व्यवस्था करता था। दूर-दूर के राजा वधू की प्राप्ति के लिये उपस्थित होते थे। निर्धारित समय पर विशाल मण्डप में स्वयंवर का आयोजन होता था। वधू सुन्दर वेश में सुसज्जित होकर हाथ में वरमाला धारण कर, अपनी सखियों के साथ स्वयंवर मंडप में प्रवेश करके एक-एक नपति का पूर्ण परिचय प्राप्त करती हुई मंथर गति से आगे बढ़ती थी। इस प्रकार वधू अपने मनोवांछित वर की ग्रीवा में माला पहनाकर उसे पति रूप में वरण करती थी। वरण के पश्चात् शास्त्रोक्त रीति से विवाह-कार्य सम्पन्न होता था। कभी-कभी स्वयंवर मण्डप रणमण्डप के रूप में भी परिवर्तित हो जाता था। इस प्रकार कालिदास के ग्रन्थों में स्वयंवर के साथ ही गन्धर्व एवं प्राजापत्य-विवाहों का भी उल्लेख मिलता है। प्राजापत्य का उदाहरण 'कुमार-सम्भव' के अन्तर्गत शिव और पार्वती के विवाह में मिलता है तथा गान्धर्व-विवाह का संकेत 'अभिज्ञान-शाकुन्तल' के दुष्यन्त और शकुन्तला के प्रेम सम्बन्ध में किया गया है। विवाह के संगठन के सम्बन्ध में वशिष्ठ, आपस्तम्ब, गौतम आदि आचार्य कहीं सहमत और कहीं असहमत हैं। वशिष्ठ केवल ६ विवाहों को स्वीकार करता है। आपस्तम्ब इन्हीं ६ विवाहों को स्वीकार करता है। गौतम और बोधायन विवाह की आठ रीतियों को मानते है। ये दोनों सूत्रकार वशिष्ठ से प्राचीन है।

महाभारत में केवल पांच विवाह ही वर्णित है ब्राह्म, क्षात्र, गान्धर्व, आसुर और राक्षस। आर्ष और प्राजापत्य को क्षात्र के अन्तर्गत माना गया है। पैशाच को निर्दिष्ट नहीं माना है। इनमें प्रथम के चार को प्रशस्त और अन्तिम को निकृष्ट माना है।

(अनुशासन पर्व ४४)

इस प्रकार भारतीय जीवन में विवाह - संस्कार महत्वपूर्ण है। वैदिक-युग में विवाह सम्बन्ध भौतिक सुखों की उपलब्धि का साधन मात्र नहीं वरन् दैवी विधान माना जाता था। 'ऋग्वेद' के अनुसार विवाह के समय वर-वधू से कहता था—"मैं सौभाग्यशाली होने के लिये तुम्हारा पाणिग्रहण करता हूँ। मैं जीवन भर तुम्हारा पति बनकर रहूँगा।" इस प्रकार पति का यह दृढ़ विश्वास होता था कि इस दैवी विधान का उल्लंघन नहीं हो सकता और विवाह सम्बन्ध किसी भी प्रकार विछिन्न नहीं किया जा सकता। उस युग में पति की मृत्यु हो जाने पर पत्नी 'सती' नहीं होती थी। वैदिक-युग में विधवा स्त्रियों का पुनर्विवाह होना सम्भव था। याज्ञवल्क्य तथा पराशर ने भी विधवा स्त्रियों के दूसरे विवाह का उल्लेख किया है। पुराणों में पति की मृत्यु पर स्त्रियों के 'सती' होने का सर्वप्रथम संकेत मिलता है। इनमें विधवा विवाह का निषेध किया गया है।

वैदिक रीत्यनुसार विवाह संस्कार के समय वर-वधू को यह विश्वास दिलाता था—"तुम मेरे साथ सात पद चलकर मेरी सहचरी बन गई हो। मैं तुम्हारे अन्तःकरण तथा आत्मा को अपने कर्म के अनुकूल धारण करता हूँ। तुम्हारा चित्त सदैव मेरे चित्त के अनुकूल रहे। मेरा आदेश तुम एकाग्र चित्त से सेवन किया करो।" इसी प्रकार अन्य स्थान पर वर, वधू से प्रतिज्ञा करता है—"मैं घृत आहुति के साथ तुम्हारे सर्वाङ्ग में रहने वाले घोर-से-घोर तम पापों को अग्नि में भस्म करता हूँ।" वधू का यह कथन भी इस अविच्छेद बन्धन को पुष्ट करने के हेतु होता है—"आप और मैं एक दूसरे के प्रिय चरणों में सदैव दृढ़चित्त बने रहें।" इससे भारतीय विवाह-संस्कार

की कल्याणकारी भावना अनुप्राणित सिद्ध होती है। अथर्ववेद का यह मंत्र ही विवाह की परिपाटी स्थापित करता है– "सौभाग्य के लिये तेरा हाथ पकड़ता हूँ। मुझ पति के साथ रह। प्रतिष्ठित और नम्र पुरुषों ने मुझे तुझे दिया है।" (अथर्ववेद १४–१५)

ऋग्वेद के मतानुसार पत्नी 'गृह' है इसी से पत्नी का 'गृहिणी' नाम सार्थक होता है। मनुस्मृति में कहा गया है कि गृहस्थ के लिये घर वास्तव में घर नहीं है अपितु गृहिणी ही वास्तविक घर है। कालिदास ने लिखा है—

'गृहिणी सचिवः सखी मिथः प्रियशिष्या ललिते कलाविधौ'।

प्रत्येक शुभ अवसर पर जब कभी पति देवताओं की सन्तुष्टि के लिये हवि देता था तो स्त्री भी साथ बैठकर यज्ञ में हवि देती थी। 'तैत्तिरीय-ब्राह्मण' में पत्नी रहित व्यक्ति के लिये किसी यज्ञ का तथा शुभ कर्म का विधान ही स्वीकार नहीं किया गया है। पाणिनि ने पत्नी शब्द की व्याख्या करते हुये कहा है—'स्त्री को पत्नी इसलिये कहते हैं कि वह यज्ञ के समय सदैव पति के साथ रहती है।" अतः इस प्रकार वैवाहिक संस्कारों के द्वारा मनुष्य की आन्तरिक और बाह्य शुद्धि होती थी।

इस प्रकार अनि प्राचीन काल से विवाह संस्कार के रूप में मान्य है। इसके आधुनिक रूप में लौकिक रीतियों का सन्निवेश अवश्य हो गया है तदपि आत्मा में विशेष अन्तर नहीं आया है। सस्कारों के आध्यात्मिक पक्ष के महत्त्व को स्वीकार करते हुये डॉ० राजबली पांडेय ने 'संस्कार-साधना' नामक अपने लेख में लिखा है-"संस्कारमय जीवन आध्यात्मिक साधना की दृढ़ भूमिका है। संस्कारों के द्वारा आध्यात्मिक जीवन का

क्रमशः विकास होता है। संस्कृत व्यक्ति अनुभव करता है कि उसका सारा जीवन एक महान यज्ञ है और जीवन की प्रत्येक भौतिक क्रिया का सम्बन्ध आध्यात्मिक तत्त्व से है। संस्कारों के द्वारा ही कर्म प्रधान सांसारिक जीवन का मेल आध्यात्मिक अनुभव से होता है। इस प्रकार संस्कारित-जीवन से शरीर और उसकी विविध क्रियाएँ पूर्णता की प्राप्ति में बाधक न होकर साधक होती हैं। शास्त्रोक्त-संस्कारों को नियमपूर्वक करता हुआ मनुष्य भौतिक बन्धनों और मृत्यु को पार कर अमृतत्व प्राप्त करता है।"

कन्यादान का महत्त्व

भारतीय परम्परा में विवाह प्रायः वर-वधू की इच्छा पर निर्भर नहीं रखा गया है। विवाह-संस्कार में कन्या का पिता अपनी कन्या को सुयोग्य-सुशील वर के हाथ में दान के रूप में सौंप देता है। कन्यादान का महत्त्व हिन्दू-धर्मशास्त्रों में विशेष रूप से स्वीकार किया गया है। दान भी त्याग-बुद्धि से सत्पात्र को ही दिया जाना सार्थक होता है—

याचकेभ्यो दीयते नित्यमनपेक्ष्य प्रयोजनम्।
केवलं त्यागबुद्ध्या यत् धर्म्मदानं तदुच्यते॥

(हेमाद्रि, दानखण्ड)

श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है कि उपयुक्त देश और काल में, अनुपकारी पात्र को दान देना कर्त्तव्य है इस बुद्धि से जो दिया है वह सात्त्विक दान है—

दातव्यमिति यद्दानं, दीयतेऽनुपकारिणे।
देशे काले च पात्रे च, तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम्॥

गीता १७।२०।

कन्या का वर को दिया जाना 'कन्यादान' कहलाता है। कन्या का पिता ही दाता होता है पर पिता के अभाव में पितामह, अग्रज भ्राता और माता भी यह दान कृत्य कर सकते हैं। याज्ञवल्क्य के अनुसार यदि दुर्भाग्य से इनमें से कोई भी न हो तो निकट का कोई भी सम्बन्धी कन्यादान करने के पुण्य का भागी बन सकता है।

हिन्दु-धर्मशास्त्रों के अनुसार कन्यादान करने वाले को अक्षय पुण्य की प्राप्ति होती है। भविष्यपुराण के अनुसार जो व्यक्ति कन्या को अलंकृत करके ब्रह्मविधि से देता है वह निश्चय ही अपने सात पूर्वजों और सात वंशजों को नरक से बचा लेता है--

ब्रह्मवेत्तान्तु यः कन्याम् अलंकृत्य प्रयच्छति।
सप्त भूतान्भविष्यांश्च, स्वकुले सप्तमानवान्।।
तेन कन्या प्रदानेन, तारयिष्यत्यसंशयम्।

लिंग पुराण के शब्दों में कन्या के शरीर में जितने रोम हैं उतने सहस्र वर्ष कन्या का दाता रुद्रलोक में वास करता है--

यावन्ति सन्ति रोमाणि, कन्यायाश्च तनौ पुनः।
तावद्वर्ष सहस्राणि, रुद्रलोके महीयते।

कन्यादान के समय पिता ही नहीं वरन् उसके निकट सम्बन्धी भी अपनी श्रद्धा-शक्ति के साथ सोना-चाँदी तथा अन्य बहुमूल्य द्रव्य दान में देते हैं।

हिन्दू-समाज में कन्यादान का धार्मिक महत्त्व है। कन्यादान का भारतीय-विवाह पद्धति में अनिवा स्थानर्य है। याज्ञवल्क्य का कथन है कि समय पर कन्या का दान न करने से, उसके प्रत्येक ऋतुकाल पर पिता को भ्रूण-हत्या का पाप लगता है। अतः ऋतुकालमती होने से पूर्व ही कन्यादान करना संगत है।

अप्रयच्छन् समाप्नोति, भ्रूणहत्यामृतावृतौ।

इस युग में विवाह के साथ-साथ 'दहेज' की एक विचित्र प्रणाली चल निकली है। आज इसका यह रूप क्रय-विक्रय से अधिक कोई मूल्य नहीं रखता। विवाह की पवित्र स्वर्ण-रेखा दहेज की कसौटी पर स्याह और अपवित्र पड़ती जा रही है। विवाह-विधान समाज के कल्याण की दृष्टि से है और होना भी चाहिये। दहेज का जो आधुनिक रूप है वह इतना कुत्सित, घृणित और लज्जास्पद है कि अनेक निरीह बालिकाओं को इस वेदी पर बलिदान होता देखा गया है।

प्राचीन काल में आज की भांति दहेज एक सौदा नहीं था और न ही वर-वधू का क्रय-विक्रय होता था। मनु व याज्ञवल्क्य स्मृति में 'यौतुकं-दद्यात्' शब्द आया है। स्मृतियों एवं धर्म-शास्त्रों के अनुसार--दुहित्रे सम्प्रदानसमये स्वेच्छया दातव्यं यत्—अर्थात् पुत्री के विवाह काल में जो स्वेच्छा से दान देता था वह दहेज कहलाता था। पिता अपनी पुत्री को सद्‌भावना के वशीभूत होकर कुछ वस्त्र, आभूषण आदि देता था और वर पक्ष इस दान को पवित्र-भेंट या उपहार समझकर सादर ग्रहण करता था। इसमें दोनों पक्षों की मर्यादा या मान-सम्मान चिरस्थायी बना रहता था। आज की भांति युवक-युवतियों को सौदे के तराज़ू पर अर्थ के पलड़े में नहीं तोला जाता था। शास्त्रों में कन्या पक्ष से अनधिकार रूप से याचना करके अर्थ ग्रहण करना पाप और पैशाचिक कर्म समझा गया था। धर्म-शास्त्र के आचार्य मनु ने अपनी मनुस्मृति में लिखा है—

"पित्रे: नाददीत शुल्कं तु कन्यामृतुमतीं हरन्॥"

अर्थात्, ऋतुमती विवाह योग्य कन्या को वरण करता हुआ वर पक्ष कन्या के पिता से किसी प्रकार शुल्क न ले। अन्य स्थान पर कहा गया है—

"न प्रच्यछेत्तु शूद्रोऽपि शुल्कं दुहितरं ददन्।

अर्थात्, कन्या के घर के धन को प्राप्त कर जो सुखी होना चाहता है वह अज्ञानी है क्योंकि इस प्रकार का कुत्सित धन अपने नियत समय पर प्राप्तकर्त्ता को समूल नष्ट कर देता है। ब्रह्मवैवर्त्त पुराण में कहा गया है--

कन्यावरविक्रेता चतुर्वर्णो हि मानवः।
सद्य प्रयाति तामिस्रं यावच्चन्द्र दिवाकरो॥

अर्थात्, कन्या अथवा वर का विक्रय करने वाला मनुष्य चार वर्णों में चाहे वह किसी भी वर्ण का हो जब तक इस संसार में सूर्य और चन्द्रमा विद्यमान है तब तक अन्धकारपूर्ण नरक में पड़ा यातना भोगता है।

इसी आशय का एक श्लोक भविष्योत्तर पुराण में भी उपलब्ध हैं। इस प्रकार उल्लिखित प्रमाणों से सिद्ध होता है कि दहेज को धर्म-शास्त्रों में अशुभ और अनिष्टसूचक कहा गया है। यहाँ तक कि लक्ष्मी भी उस घर में वास नहीं करती, जिस घर में दहेज के रूप में क्रय-विक्रय होता है। भविष्योत्तर पुराण में एक स्थल पर महालक्ष्मी ने कहा है—

कन्यावरविक्रेता नरघाती च हिंसक।
नरकागारसदृशं न यामि तस्य मन्दिरम्॥

अर्थात्, मैं (लक्ष्मी) कन्या अथवा वर का सौदा करने वाले और मनुष्य की हिंसा करने वाले क्रूर अत्याचारी मनुष्यों के नरक सदृश घरों में नहीं जाती हूँ। दूसरी ओर मनु ने इसी प्रकार का संकेत कन्या के पिता के लिये भी किया है—

न कन्यायाः पिता विद्वान्गृह्णीयाच्छुल्कमण्वपि।
गृह्णञ्शुल्कं हि लोभेन स्यान्नरोऽपत्यविक्रयी॥

अर्थात्, विद्वान् पिता कन्या के लिये थोड़ा सा भी शुल्क न ले। लोभवश शुल्क लेने से मनुष्य सन्तान बेचने वाला हो जाता है। अतः दोनों पक्ष का द्रव्य लेना असंगत है।

वस्तुतः दहेज-प्रथा जिसके आधार पर आज का सभ्य समाज अपनी पैशाचिक जिह्वा को लपलपाये फिरता है एक घृणित और निंदनीय पातक है और अधर्म का पोषण करने वाला है। आज का दाम्पत्य जीवन एक व्यापार बनता जा रहा है। हमारे हिन्दू समाज में दहेज-प्रथा के कारण लड़की के पिता को चाहे कितनी भी विपत्तियों का सामना करना पड़े, दहेज के कारण ऋणी होकर महाकंगाल होना पड़े परन्तु लड़के के पिता को तो दहेज मिलना ही चाहिये। वह सम्बन्धी जो अपने ही सम्बन्धी का घर बर्बाद कर अपना घर आबाद करना चाहता है क्या उसे हम वास्तविक सम्बन्धी कह सकते हैं? क्या वह सम्बन्ध अटूट रह सकता है जिसमें सम्बन्धी की नस-नस में दहेज के धन का लोभ रक्त और मज्जा की भांति समाया हुआ हो?

एक ओर हम जागृति और सुधार का दावा करते हैं, ऊँच-नीच का भेद-भाव मिटाकर समता का प्रचार करना चाहते हैं, दूसरी ओर लड़के का मूल्य आंका जाता है। किसी निर्धन बालिका को आत्महत्या करने को विवश किया जाता है। उसके पिता की निर्धनता पर व्यंग कसा जाता है। यह कहाँ तक संगत है? यह हमारा विचारणीय विषय है। विशेषकर युवक-युवतियों को इसके विरुद्ध ठोस और सक्रिय कदम बढ़ाना चाहिये। जब तक यह दहेज का भूत प्रत्येक जाति व समाज से समाप्त नहीं होगा तब तक दाम्पत्य जीवन में प्रेम, विश्वास, सहानुभूति, त्याग, कर्त्तव्य आदि सब स्वप्नवत् रहेंगे तथा

दाम्पत्य-जीवन में सुख-समृद्धि का कोई बुनियादी तत्व इसकी आधार-शिला नहीं बन सकता।

आज का युग प्रगति और क्रान्ति की आधारशिला रखने की प्रेरणा देने का युग है। समाज के प्राचीन एवं सत्वहीन ढांचे ढीले होकर क्रान्ति की हवा से चरमराने लगे हैं। मानव अपने विकास क्रम में अग्रसर होना चाहता है। मार्ग के समस्त रूढ़ि-रिवाजों, निरर्थक-बंधनों का वह बहिष्कार चाहता है। वह समाज में नया रक्त, नया खोल, नवीन उत्साह और नव-चेतना व नव-निर्माण लाने को आतुर है। 'रोमारोलां' ने कहा है–"विप्लव किसी वर्ग विशेष की सम्पत्ति नहीं है जो जगत के आनन्द और कल्याण के लिये नव-निर्माण करना चाहते हैं वे सभी विप्लवी हैं।" आज हमारा समाज हर प्रकार से बुराइयों से पूर्ण है। सदियों के नासूर आज हरे होकर हमारे अंग को क्षत-विक्षत करने को प्रस्तुत है। प्राचीन परम्परा की दुहाई देकर आधुनिक सभ्य शिष्ट और सुसंस्कृत समाज दहेज की याचना बिना किसी संकोच व झिझक के करता है। कन्या-पक्ष से जितना धन 'खींचना' हो इसी अवसर पर खींचा जाता है। भला ऐसे अवसर फिर कब-कब आते हैं? यही सोचकर वे 'सुरसा' के समान अपने विशाल मुख को फैलाते हैं और मनमाना दहेज लेने में अपनी सानी नहीं रखते। यह दूषित और हीन मनोवृत्ति आज के सभ्य कहलाने वाले समाज में अधिकाधिक पनपती जा रही है। विशेषकर उन महापुरुषों की हस्ती की समानता ही कौन करे जिनका पुत्र 'फोरेन रिटर्न' हो अथवा डाक्टर या इंजीनियर हो। ऐसे महापुरुषों के निकट साधारण जन तो फटक नहीं सकते, वहाँ तो उन्हीं की पहुंच होती है जो उन महापुरुषों के "सुरसा से मुख" में 'स्वर्ण के

लड्डू' ठूंस सके और उनकी पैशाचिक अर्थ-लोलुपता को तृप्त करने में समर्थ हो सके। दूसरी ओर इनके अनुकरण पर समाज के सामान्यजन भी दहेज की याचना करने में चूकते नहीं है क्योंकि जब 'बड़े लोग' ही मुंह मांगा दहेज लेते हैं तो फिर 'छोटों' की बिसात ही क्या ? इसे क्या समझा जाय, यह तो बड़ों के जूठन का अंश जो है।

यह है आज की स्थिति ! आज के सभ्य और उन्नत कहलाने वाले समाज की मनोवृत्ति का सूक्ष्म रेखाचित्र। यहीं पर आकर हमारा पवित्र-विवाह विधान दूषित होता जा रहा है। दहेज के इस कुष्ट रोग ने सामाजिक ढांचे को ही जर्जरित बना दिया है।

यह स्थिति कहाँ तक उचित व न्याय संगत है ? इस प्रश्न का उत्तर हम अपने मानस को टटोल कर दें। 'मेजिनी' की इस आवाज को समझें--"अपने पुरखों के डेरों में मत सोओ, दुनिया आगे बढ़ रही है। इसके साथ आगे बढ़ो !"

****

राजस्थान में विवाह का मांगलिक-विधान

विवाह हमारे लिये आनन्द उल्लास स्फूर्ति और प्रेरणा की विभिन्न रंगीनियां लेकर जीवन का एक महत्वपूर्ण पक्ष बन गया है। विवाह की प्रसन्न किलकारियाँ सम्बन्धी जनों के हृदय पर अभूतपूर्व प्रमोद और मनोरंजन की शोभा बनकर लहराती है। विवाह का मोह प्रत्येक नर-नारी को होता है। वर-वधू ही क्या, विवाह में सम्मिलित होने वाले भी अपने मानस की उमंगों को जमकर खुलने का अवसर प्रदान करते हैं। वर-पक्ष में, विशेषकर 'बरातियों' को चार दिवस तक नवीन उत्साह और नव-जीवन का आभास हो उठता है। वे एकबारगी ही अपने अतीत के जीवन में खो जाते हैं और उनके स्मृतिपटल पर वह दिवस चित्रित हो उठता है—जिस दिन वे भी वर के रूप में सजधज कर विवाह की वेदी के पाहुँने बने थे।

वर तथा वधू को विवाह का 'चाव' वाग्दान के साथ ही लग जाता है। वे अनुराग की भावनाओं के सहारे कल्पनालोक के वासी बन जाते हैं और भावी जीवन के सुखद रंगीन दिवा-स्वप्नों में खोये-खोये से रहते हैं। पलकों पर लहराती निद्रा-रानी नीलगगन पर झिलमिलाते सितारों की आभा में खो जाती है। पूर्णिमा के जवान चाँद की शीतल शुभ्र ज्योत्स्ना

में उनका प्यार और यौवन का उभार अंगड़ाई लेने लगता है। आनन्द के अतिरेक में भाव-विमोहित से हो पवन के हल्के हिलकारे के साथ वे अपने अनजाने जीवन साथी को आहों के मूक संदेशे भेजकर अनुभूति की व्यग्रता में लिप्त रहते हैं। यह सच ही कहा जा सकेगा कि विवाह का मंगलमय पक्ष उषा की लालिमा में झिलमिलाता, जीवन में सुखद सजीव और कर्मरत रश्मियों का ज्योतिमय प्रभात है।

हमारे यहाँ विवाह की चर्चायें उस समय से ही गृह के आंगन में सम्बन्धी जनों के अधरों पर उभरने लगती हैं जब बालक-बालिकायें 'सयाने' होने लगते हैं। कन्या पक्ष को इसकी व्यग्रता विशेष रूप से रहती है। कन्या का पिता कन्या उत्पन्न होने के दिन से ही उसके विवाह और भावी जीवन के सुख की चिन्ता को लेकर आकुल रहने लगता है और यह चिन्ता तब तक समाप्त नहीं होती जब तक योग्य वर के हाथ में कन्या दान नहीं दे दिया जाता। पंचतंत्र में एक स्थान पर इसी प्रकार का संकेत मिलता है।

पुत्रीति जाता महतीह चिन्ता, कस्मै प्रदेयेति महान्वितर्कः
दत्वा सुखं यास्यति वा न वेति कन्यापितृत्वं खलु नाम कष्टः।

कहा जाता है कि प्राचीन क्षत्रिय घरानों में कन्या का होना अभिशाप समझा जाता था क्योंकि कन्या के जन्म होने पर उनकी राजपूती शान (मूछों की ऐंठन) को झुकना पड़ता था–विवाह करके किसी को जँवाई बनानें से! क्या यह स्वाभिमान की पराकाष्ठा नहीं थी ? इसीलिये शायद वे लोग उत्पन्न होते ही कन्या का वध करने में भी हिचकिचाते नहीं थे। कदाचित ऐसे 'कन्या-वधिक' स्वाभिमानी वीर उँगलियों पर ही गणना करने वाले रहे होंगें नहीं तो राजस्थान

कर्मवती, पद्मिनी, पन्नाधाय हाड़ारानी, जैसी वीरांगनाओं के पवित्र श्लाघनीय चरित्र-गाथाओं से वंचित रह जाता तथा जिन नारी रत्नों के आदर्शों की उज्ज्वल कीर्ति को लेकर यहाँ के चारण कवियों ने जो प्रशस्तियाँ लिपिबद्ध की हैं उनका भी कोई मूल्य नहीं रह पाता।

१। सम्बन्ध का ठहराव

कन्या के सयानी होने के पूर्व से ही कन्या का पिता होनहार कुलशील और योग्य वर की खोज में यत्र-तत्र भटकने लगता है। वर-वधू की सगाई-सम्बन्ध निश्चित होने के पूर्व 'कुंडली-मिलान' की प्रथा केवल राजस्थान में नहीं, समूचे भारत के अनेक जनपदों में प्रचलित है। 'कुंडली' के अभाव में पण्डितों से वर-वधू के 'बोलते-नाम' पर ही गुणों का मिलान करवा लिया जाता है। कुण्डली-मिलान के पश्चात् वर का पिता कन्या को देखने जाता है, कन्या पसन्द आने पर आगे वार्ता को मार्ग मिलता है। तत्पश्चात विवाह पर 'खर्चे-पानी' की वार्त्ता वर-पक्ष की ओर से उठाई जाती है, कन्या को कितना जेवर दिया जायगा, वर को वाग्दान के समय कितने का 'चैक' मिलेगा तथा 'मिलनी' में 'फ्रिज व मोटर-साइकिल तो मिलेगी ही। विवाह के अवसर पर क्या-क्या भेंट नजर की जायगी, बरातियों के स्वागत सत्कार में किसी प्रकार की त्रुटि तो नहीं होगी। बरात का एक पक्ष का किराया तो निश्चित ही है, वर के पिता को पहरावणी में क्या-क्या उपहार भेंट किया जायगा। वर की माँ का 'सासू छाबड़े का वेश' तो 'सैफून' का होना ही चाहिये, इसके अतिरिक्त अन्य सम्बन्धियों को अलग से मिलेगा ही' आदि-आदि भूमिका से भरपूर लच्छेदार शब्दावली में 'सा' का विशेषण लगाते हुये वार्तायें होती हैं और अन्त में--

"कांई कर्‌यो जाव' साहजीसा जो परम्परा बडेरा छोडग्या वाने माननो ही पड़े छै। टाबर की पढ़ाई लिखाई में भी खर्च-खाटो घणो हुयो ही है, आप सब जानो हो, आपसूं कांई छिप्यो कोयनी। आपणे किण बात री कमी छै। भगवान रो दियोड़ो सब कुछ है और आप भी साहजी इण बातां में जानो हो। थानै कहतां शोभा कोयनी।" आदि के साथ कथन की समाप्ति होती है। इसके अतिरिक्त वर-पक्ष के अन्य सम्बन्धी भी यथास्थान इस भूमिका में हाँ, हूँ, वाह कहकर अपना पार्ट अदा करना नहीं भूलते। बेचारा कन्या का पिता मौन रहकर सब कुछ स्वीकार कर लेता है। यदि कोई भाग्य का हो और वह यह कह दे—"म्हारे तो सा 'कूंकूं-कन्या ही है देबा-लेबा न कांई कोनी' तो समझ लीजिये उसकी खैर नहीं। अपमानित और लांछित होकर उसे लौटना ही पड़ता है। आजकल यह प्रथा सर्वत्र अपने किसी न किसी रूप की आड़ में वर-पक्ष की महत्ता, उच्चता, शालीनता की दुहाई देकर चल रही है-- इसका शास्त्रीय नाम 'दहेज' 'दान' या जो कुछ समझे। आज का सभ्य-प्राणी इसका भक्त भी है और शत्रु भी। कभी-कभी इसमें छलकपट भी हो जाता है जिससे कन्या का जीवन दूभर हो जाता है और उसे सदैव व्यंग्य-बाणों से बेधित किया जाता है। राजस्थान में विशेषकर यह दहेज प्रथा सभी वर्णों में प्रचलित है कहीं अत्यधिक तो कहीं न्यून रूप में। परन्तु वैश्य समाज में इस प्रथा का जोर अब भी है; यद्यपि शिक्षित वर्ग अवश्य इस प्रथा के उन्मूलन का प्रयत्न करने लगा है। पर यह प्रयास आटे में नमक जैसा ही है और कुछ नहीं।

२। वाग्दान दस्तूर

दोनों पक्षों की ओर से इस प्रकार निश्चय हो जाने पर

बात पक्की समझी जाती है। पण्डितों से शुभ मुहूर्त निकलवाकर सगाई का कार्य प्रथम वर-पक्ष के गृह पर प्रायः प्रातःकाल अथवा संध्याकाल को सम्पन्न किया जाता है। इस अवसर पर वर-पक्ष की ओर से अपने जाति बन्धुओं, इष्ट मित्रों आदि को बुलावा (निमन्त्रण) दिया जाता है। कहीं पर यह कार्य नाई द्वारा, और कहीं जाति के पंडे या सेवक के द्वारा होता है। निश्चित समय पर आमन्त्रित स्त्री-पुरुष एकत्र हो जाते हैं। गृह के विशाल आंगन या चौक में जाजम बिछाकर बैठने का प्रबन्ध किया जाता है। ढोल और शहनाई के स्वर गुंजरित हो उठते हैं। वर को बुलाकर उपस्थित समुदाय के मध्य रक्खी चौकी पर बिठाया जाता है। वर के आकर बैठने पर पुरोहित वर से गणपति की पूजन विधि सम्पन्न कराता है। दूसरी ओर महिला-मण्डली की ओर से इस उत्सव पर मंगल गीतों में विशेषकर देवी देवताओं के ही गीत गाये जाते हैं। देवी-देवताओं में प्रधानतः अपने कुल देवता के साथ ही तेजाजी, भैरूजी, जुझांरजी, माताजी, सतीमाता व पित्तरों के गीत गाये जाते हैं। ये गीत वर की मंगल कामना के प्रतीक है जिसमें वर तथा वधू के भावी जीवन के प्रति शुभ भावना निहित रहती है। इधर पूजन का कार्य चलता रहता है तो उधर दूसरी ओर अतिथियों के स्वागत सत्कार का कार्य सम्पन्न होता है। आगन्तुक अतिथियों को ठंडाई व शरबत आदि ऋतु अनुसार पेय पदार्थ पिलाया जाता है। पान, इलायची, सुपारी तथा इत्र से अतिथियों का सत्कार किया जाता है। वर द्वारा पूजा करने के पश्चात वधू-पक्ष की ओर से आया हुआ पुरोहित, नाई या अन्य सगा सम्बन्धी वर की 'गोद भरता' है। वर के तिलक लगाकर उसकी गोद में रुपये, श्रीफल, मिष्टान्न, छुवारे तथा बताशे

रखे जाते हैं। इसके अतिरिक्त वधू पक्ष की ओर से फलों व मिठाइयों के थाल, वर के हेतु पाँचों वस्त्र भेंट किये जाते हैं। गोद भरने की विधि पूर्ण हो जाने के पश्चात् वर उठ जाता है और अपनी गोद की सामग्री अपनी माता की झोली में जाकर डाल देता है। तदुपरान्त वर अपने माता-पिता व अन्य सम्बन्धियों तथा आगन्तुक महानुभावों को 'ढोक' (प्रणाम) देता है। ढोक देने पर सम्बन्धी कुछ मुद्रा (रुपये) आदि उसके हाथ में देते हुये दीर्घायु होने का आशीर्वाद देते हैं। इसके पश्चात् आगन्तुक अतिथियों को केवल धन्यवाद के साथ ही नहीं अपितु श्रीफल या गुड़ भेंट करके विदा किया जाता है। यह भेंट वर-पक्ष की ओर से की जाती है। स्त्रियों में बताशे बाँटे जाते हैं। इस प्रकार यह संस्कार सम्पन्न होता है।

इसी दिन मांगलिक भोजन (लापसी-चावल) वर के घर बनाया जाता है। अपने कुल देवता के भोग लगाकर वधू-पक्ष की ओर से आये अतिथियों को भोजन परोसा जाता है। तत्पश्चात् अपने सम्बन्धी जनों को जिमाया जाता है। वधू के घर से आये हुये व्यक्ति की दो-चार दिन अच्छी आवभगत की जाती है। फिर उसे सिरोपाव, श्रीफल व रुपये भेंट स्वरूप देकर, गुलाबी या केसरिया रंग के उनके वस्त्रों पर छींटे देकर ससम्मान बिदा किया जाता है।

वाग्दान संस्कार वर के घर पर सम्पन्न हो जाने के पश्चात् वर का पिता शुभ मुहूर्त में कन्या के घर को प्रस्थान करता है। कन्या पक्ष के यहाँ भी इसी प्रकार का उत्सव सम्पन्न किया जाता है। यह समारोह उतना धूमधाम से नहीं होता जितना वर-पक्ष के यहाँ होता है। समधी के आगमन पर पास-पड़ोस व नाते-रिश्तेदारी में औरतों को गीतों के लिये निमन्त्रित किया

जाता है। कन्या को चौकी पर बिठाकर उसकी गोद भरी जाती है उसे वस्त्राभूषण उपहार-स्वरूप दिये जाते हैं दोनों ब्याहीसगे (वर व वधू के पिता) गले मिलते हैं। इसी समय एकत्र महिलायें ब्याहीजी को 'गाल्यां' गाती हैं। थोड़ी देर के पश्चात् महिला-मण्डली को बताशे देकर विदा किया जाता है। कुछ दिनों हलवे-पूरी, खीर-मालपुये, घी-घेवर आदि का आतिथ्य स्वीकार करके वर के पिता विदा होते हैं। विदा के समय उन्हें सिरोपाव व कुछ मुद्रायें (रुपये) भेंट में दी जाती है तथा उन पर रंग डालकर विदा किया जाता है। विवाह की तिथि सुविधानुसार इस समय या बाद में तय करली जाती है।

वाग्दान संस्कार के पश्चात् जब तक विवाह कार्य सम्पन्न नहीं हो जाता तब तक प्रत्येक पर्व त्यौहार व उत्सवों पर दोनों पक्षों की ओर से वर व वधू के लिये भेंट उपहार आदि भेजे जाते हैं। राजस्थान में प्रमुख रूप से वर को गणेश चौथ पर विशेष उपहार भेंट किये जाते हैं तथा कन्या को छोटी-बड़ी तीज व गणगोर आदि पर्व पर उपहार भेजे जाते हैं।

३। लग्न-पत्रिका

विवाह का कार्य उस दिन से ही प्रारम्भ हो जाता है जिस दिन कन्या-पक्ष की ओर से 'लग्न-पत्रिका' अथवा 'पीली चिट्ठी' वर-पक्ष के यहाँ पर नाई अथवा पुरोहित लेकर पहुँचता है। धूमधाम से जाति बन्धुओं तथा पंचों की उपस्थिति में 'वर' को तिलक करके लग्न-पत्रिका उसकी गोद में रख दी जाती है। लग्न-पत्रिका को वर की ओर का पुरोहित उठाकर खोलता है और उस पर कुंकुम के छींटे देकर उपस्थित समुदाय के सम्मुख

उच्च वाणी में पढ़कर सुनाता है जिससे सब लोग सुन सके। लग्न-पत्रिका में—

सिद्ध श्री जोग लिखी..................से श्रीमान ब्याईजी सा ....(परिवारिक सज्जनों की नामावली) को............ कन्या-पक्ष की (परिवार वालों की नामावली) ओर से राम-राम बंचावसी।

लग्न-पत्रिका का आरम्भ इस प्रकार से होकर मध्य में विवाह की निश्चित तिथि की सूचना, लग्न का समय आदि लिखा होता है और अन्त में—'बींद राजा सहित बरात संजोय पधारबा की कृपा करिजो' रहता है। लग्न-पत्रिका में यह भी निर्देश रहता है कि किस मुहूर्त में भांवरे पड़ेगी तथा कितने तेल चढ़ने हैं। लग्न-पत्रिका सुनने के पश्चात् पंच लोग वर तथा कन्या-पक्ष के गोत्रादि पूछते हैं। वर-पक्ष की ओर से पंचों को तथा उपस्थित व्यक्तियों को गुड़ बाँटा जाता है तथा महिला समुदाय को गुड़ अथवा बताशे वितरित किये जाते है। लग्न के दिन स्त्रियां अन्य गीतों के साथ देवी-देवताओं के गीत भी गाती है। इस प्रकार विवाह कार्य का श्री गणेश लग्न-पत्रिका के आगमन से होता है। प्रथम यह पत्रिका वधू के हाथ में रखी जाती है तत्पश्चात लड़के (वर) के यहाँ आती है। पत्रिका के साथ धन-द्रव्य भेंट स्वरूप भेजा जाता है।

प्रस्तुत लग्न–गीत में महिलाएँ 'वर' को शुभ सूचना देती है कि 'तुम्हारे ससुराल से पत्र आया है तुम हठ क्यों करते हो उसे पढ़ते क्यों नहीं'....कहती हुई स्त्रियां वर के उपयुक्त वस्त्राभूषणों का वर्णन करती है। यह गीत देवी–देवताओं के गीत के पश्चात गाया जाता है। इस गीत में वर के उपयुक्त वस्त्र और आभूषणों का ही विशेष वर्णन है जिन्हें कि वर धारण करके 'बींद राजा' के रूप में सज्जित हो जाता है।

लग्न का गीत

थाकां सासरिया सूं जी बनासा कागज आया राज
थे तो बांचो क्यूंनी जी बनासा काईं हट लाग्या राज ।।
म्हारी सांकली रो डोरो-राइवर बिंदली को रे मकोड़ो ।
म्हारा बाजूबन्द री लूम लाडला काईं हट लाग्या राज ।।
थांका सासरिया सूं जी बनासा पेचा आया राज ।
थे तो बांधों क्यूंनी जी बनासा काईं हट लाग्या राज ।।

इस गीत में इसी प्रकार वर के उपयुक्त अन्य वस्त्राभूषणों जैसे घड़ियां, कंठी, डोरा, बींटी, पनियाँ, जामा आदि का बखान किया जाता है।

धान हाथ लेना अथवा मूंग हाथ लेना

लग्न-पत्रिका के आने कुछ दिन बाद ही अथवा उसी दिन 'धान हाथ लेवे' द्वारा ७ औरतें विवाह कार्य प्रारम्भ करती हैं। इस कार्य में निम्न वस्तुयें काम में आती हैं—

२ छाजला
२ बेलन
२ मूसल
७ पैसा
७ प्रकार का धान

७ औरतों (सुहागिन स्त्रियों) के तथा छाजला, बेलन व मूसल के टीकी देकर मौली बांधी जाती है। कसूमल गोटे की 'ओढ़नी' के नीचे ये सब स्त्रियां बैठ जाती हैं (यह चंदवा कहलाता है) फिर छाजले में धान और बेलनी परस्पर ले-देकर गणेशजी के निकट रख देती हैं। ये वस्तुएँ माया के स्थान पर रखी जाती हैं और तब तक वहीं रहती हैं जब तक माया नहीं उठ जाती।

यही सात सुहागन स्त्रियां चक्की पूजन करती हैं और चक्की पर पांच स्वस्तिक चिह्न अंकित करती हैं। मोलियां बांधती हैं। 'पीठी' पीसती हैं। एक एक करके सातों स्त्रियां पीठी पीसने का दस्तूर करती हैं। ये ही सात स्त्रियां मेंहदी पीसने का दस्तूर भी करती हैं।

विवाह के कार्य का वास्तविक समारम्भ तब होता है जब विवाह के केवल पन्द्रह दिन शेष रह जाते हैं। ये दिन बड़े आनन्द और उल्लास के होते हैं। सम्पूर्ण वातावरण गीतों एवं लोक-नृत्यों की रुनझुन से मुखरित हो उठता है। एक निश्चित तिथि पर सात सुहागिन स्त्रियां हरे मूंग चुनना प्रारम्भ कर देती हैं इसे मूंग हाथ में लेना भी कहा जाता है। यह कार्य दिन में गणपति का आह्वान गीत गाकर किया जाता है। यहीं से स्त्रियां बन्ना गीत आरम्भ कर देती हैं।

इसी प्रकार कन्या-पक्ष की ओर भी सुहागिन स्त्रियां हाथ में धान लेकर विवाह के कार्य प्रारम्भ करती हैं। यह काम 'हथलिया' कहलाता है। वर तथा वधू–पक्ष के यहां 'मूंग हाथ' में लेने से विवाह का कार्य प्रारम्भ हो जाता है। इसके पश्चात दोनों पक्षों द्वारा अपनी-अपनी जाति और समाज तथा व्यवहार के व्यक्तियों में गुड़ वितरित किया जाता है। मारवाड़ियों में 'कसार के लड्डू' और शक्कर का गिडोला देते हैं। कहीं-कहीं गुड़ आदि वितरित करते समय पुरुषों के साथ स्त्रियां भी सामूहिक रूप में साथ जाती है। पुरुषों में घर का एक व्यक्ति, सेवक या नाई ही रहता है।

दोनों पक्षों की ओर से जिनको गुड़ दिया जाता है वे 'आन्दली'—मिष्ठान, विविध प्रकार के फल-फूल, मेवा,

नारियल भेजते हैं। आन्दली के साथ भेंट स्वरूप कुछ मुद्रा भी रखी जाती है। वर तथा वधू के लिये आन्दली में पान और पुष्पमाला का महत्त्वपूर्ण भाग रहता है। आन्दली स्वीकार करने पर शादी के प्रीतिभोज तथा अन्य अवसरों पर उन्हें न्योता-निमन्त्रण दिया जाता है। यह आपसी व्यवहार का एक आवश्यक और विशेष अंग है।

इस अवधि में महिलाएँ सामूहिक रूप से विवाह गीत गाती रहती हैं। वर-पक्ष के गीतों में प्रमुखतया घोड़ी, बन्ना और सेवरा आदि हैं। वधू-पक्ष के गीतों में बनी और सुहाग-कामण आदि गीत मुख्य रूप से गाये जाते हैं। रात्रि को ढोल और कांसी की थाली के साथ नृत्य और गीतों का विशेष आयोजन होता रहता है। बान बैठ जाने के बाद प्रतिदिन इस प्रकार का आयोजन चलता रहता है।



मायां

विवाह के घर में एक सुसज्जित कक्ष में मायां की स्थापना की जाती है। स्वच्छ लिपी पुती दीवार पर गणपति की मूर्ति चित्रित की जाती है। गणपति के दायें बायें ऋद्धि-सिद्धि चंवर डुलाती हुई खड़ी की जाती है। गणपति के चरणों के निकट उनके वाहन मूषक को बिठाया जाता है। गणपति के चित्र के निम्न भाग में सात टीकी कुमकुम की व सात टीकी घी की लगाई जाती है। पास में कलश स्थापित किये जाते हैं कलश के नीचे आखे गेहूं जौ आदि रखे जाते हैं। पास में घी का दीपक रहता है जो निरन्तर जब तक मायां नहीं उठती है तब तक जलता रहता है। इस प्रकार यह स्थान जहां विवाह के महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पन्न किये जाते है मायां का स्थान कहलाता है। वर और कन्या दोनों ही के पक्षों में सर्वप्रथम मायां की स्थापना की जाती है। तदुपरांत बान विनायक का कार्य होता है।

मायां के स्थान की पवित्रता का विशेष ख्याल रखा जाता है। इसमें किसी अस्पृश्य स्त्री या पुरुष को प्रवेश नहीं करने दिया जाता है। वर व कन्या के सब मांगलिक कार्य इसी स्थान पर सम्पन्न किया जाना शुभ माना जाता है विशेष कर सुहाग की मंजुल मनोहर और मनभावनी रात्रि का आस्वादन करने का मुख्य स्थान भी यही रहता है। वर तथा वधू का प्रथम समागम देवता की साक्षी में सम्पन्न होता है शायद विशेष प्रयोजन से ही। जैसे पुरुषत्व और नारीत्व की

भावनाओं का लेखा जोखा यहीं पर ही होने का विशेष महत्व है।

विवाह के सब मांगलिक कार्य 'मायां' में ही सम्पन्न किये जाते हैं। वैसे वैवाहिक कार्य तो मूंग हाथ लेने के दिन से ही प्रारम्भ हो जाता है पर वास्तविक कार्यों का 'श्री गणेश' बान बैठने से होता है। बान बैठने से तात्पर्य वर तथा वधू द्वारा गणपति पूजन और गणेश स्थापना से है। छोटा विनायक या छोटा बान पहले बैठता है इसका दिन शुभ तिथि देख कर पुरोहित द्वारा निश्चित किया जाता है।

छोटे बान के दिन प्रथम बार वर अथवा वधू के पीठी की जाती है। ब्रह्म वेला में शुभ मुहूर्त पर कन्या तथा वर पक्ष के यहां स्त्रियां मंगल भावनाओं के साथ गीतों की स्वर लहरी पर मुखरित पहला तेल चढ़ाने का आयोजन करती हैं। हल्दी तेल चढ़ाने वाली स्त्रियां 'गोरनी' कहलाती हैं। उनकी संख्या पांच सात या ग्यारह तक भी होती है। 'पोठी' और तेल चढ़ने के बाद स्नानादि किया जाकर स्वच्छ वस्त्र पहिनाये जाते हैं और फिर 'मायां' में गणपति पूजन पुरोहित द्वारा प्रारम्भ होता है। वर तथा वधू के निकट छोटा बालक या बालिका बैठाई जाती है। ये विनायक के प्रतिरूप होते है जो 'विनाय-कड़ा'' कहलाते हैं। छोटे बान का कार्य मायां में सम्पन्न होता है जिसकी विधि इस प्रकार है

१. दीवार पर गणपति का चित्र मंडित किया जाता है।
२. पीली मिट्टी के गणेश जी बनाकर पूजन किया जाता है।

३. कलश की पूजा की जाती है।
४. घी का दीपक जलाया जाता है।
५. लपसी का भोग जगाया जाता है।
६. देवी देवताओं के लावणे दिये जाते हैं।
७. 'सवासिनी' द्वारा वर अथवा वधू की आरती उतारी जाती है।

पूजन विधि के सम्पन्न होने तक स्त्रियां देवी देवताओं के गीत गाती रहती हैं। पूजन के समाप्त होने पर सगे सम्बन्धी वहीं भोजन का आनन्द उठाते हैं।

विनायक

(१)

गढ़ रणतभंवर सूं आवौ विनायक करो नी अणचीती विड़दड़ी।
विड़द बिनायक दोनूं जी आया, आय तो उतरया हरिया बाग में।
ढूंढ़त-ढूंढ़त नगरी जी ढूंढ़ी, कोई घर तो बताओ लाडले रे बापरो।
ऊँची सी मेड़ी लाल किवाड़ी, केल झबरके वांके लाडले रे बारणे।
पहलो तो वासो सरवर वसियो, सरवर भरियो ठण्डे नीर सूं।
भरियो तो सरवर लैवे रे हिलोला, नीर भरे पणिहारियां।
दूजो तो वासो बागाजी वसियो, बागा में छायो मरुओ मोगरो।
तीजो तो वासो ग्वाड़ाजी बसियो, ग्वाड़ा भर्या धोलीधेन सूंजी।
गाय गवाड़े भैंसा जी बाड़े सोवन थाम विलोवणो।
चोथो वासो सेले जो बसियो, सेले में भरिया बामण बनिया।
पांचवों तो वासो तोरण वसियो, तोरण छाई रुड़ी चुड़कल्या।
अदन बदन दोय चुड़कल्या बोली, ज्यां बीच बोल्यो हरियो सूवटो।
छट्ठो तो वासो मायां जी वसियो, मायां में बैठा देवी देवता।
देव देवी ने नारेल बधारस्या, राय बनो परणावस्या।
सातवों तो वासो चंवरी जी वसियो, चंवर्‌या बैठा लाडी लाडला।

बधजे ये लाडी बड़ पीपल ज्यूं, फलजे नीम जमीर ज्यूं ।
लाडली रो चीर बधजो, रायवररो वागो मोलिया ।

(२)

कठा का बाजा वाजा हो गजानन्द, कठ किया छे मिलान–
–ओ गजानन्द ।
रणतभंवर रा बाजा बाताओ गजानन्द अजमेर लिया छे मिलान
–ओ गजानन्द ।
बून्दी रे छाजे नोबत बाजे तो झरन झरन झालर वाजे
–ओ गजानन्द ।
नौबत वाजे नगारा भी बाजे तो झरन २ झालर बाजे
–ओ गजानन्द ।
बून्दी रे छाजे नौबत वाजे तो झरन २ झालर बाजे
–ओ गजानन्द ।

(३)

चालो विनायक आपा बजाजी रे चालां
तो आछा २ कपड़ा मुलावां सो म्हारा बिरद विनायक ।
चलती गाडी री बावो लोयर तोड़ी,
हाल्यां रा मुंडा बांका किया ओ मारा विरद विनायक ।
चालो बिनायक आपा सोनिड़ा रे चाला
ओ अच्छा २ गहणा मुलावां ओ मारा विरद विनायक ।
चलती गाडी रो बाबो लोयर सांधी
हाल्यां रा मुन्डा सीधा कीधा जी मारा विरद विनायक ।
दून्द दून्दयाला बाबा सून्ड सूंडालो, ओछी सी पीडयां एज नगारा
ओ म्हांरा विरद विनायक ।

(४)

म्हारी गाडी रही बालू रेत में विनायक एक बेलां के कारणे ।
म्हारो धन रहयो धरती माये गजानन्द एक पूता के कारणे ।

म्हारो हार रियो गला माहे गजानन्द एक बहू के कारणे
म्हारा चीर रीया बक्सा मांय गजानन्द एक दीयड़ रे कारणे ।
म्हारी हांडा री हांडा माहे गजानन्द एक जवांई रे कारणे

पीठी

छोटे बान के दिन से ही वर या वधू के पीठी की जाती है वर या कन्या को घर के बड़े आंगन अथवा चौक में बाजौट (चौक) पर पूर्व की ओर मुख करके बिठाया जाता है। गौरनें दूब लेकर उसे तेल में डूबा कर बाएँ हाथ पर सीधा हाथ रखकर और बाएं से सीधे पैरों को फिर घुटनों फिर कन्धों को तथा फिर मस्तक को क्रम से स्पर्श करती हैं। यह कार्य भी गिनकर सात या ग्यारह बार किया जाता है। तेल चढ़ने के बाद हल्दी के साथ पीठी (उबटन) की जाती है। पीठी हल्दी, जौ, बेसन और तेल को मिलाकर बनाई जाती है (सम्पन्न घरानों में केसर और बादाम से उबटन किया जाता है)। पीठी के अनेक गीत इस अवसर पर महिला मण्डली के द्वारा गाये जाते हैं। तत्पश्चात बहन या बुआ द्वारा आरती की जाती है। बाद में कन्या या वर गणपति पूजन के लिये मायां में जाते हैं। यह क्रम छोटे बिनायक से प्रारम्भ होकर वर की निकासी के दिन तक तथा कन्या के लग्न के दिन तक प्रतिदिन निश्चित समय पर सम्पादित होता रहता है।

निम्नलिखित गीत पीठी के अवसर पर महिलाओं द्वारा गाए जाते हैं। प्रथम गीत में पीठी रचना-विधि का स्पष्ट संकेत है। द्वितीय गीत में हल्दी की रंगीन आभा का अंकन है जो बना या बनी पर उभरता है पीठी करने से। इसमें परिवार के बाबा से लेकर मामा तक को जो चाव उत्पन्न होता है उसका

मधुर उल्लेख हुआ है। तृतीय गीत में गौरनें जो तेल चढ़ाती हैं उनकी चूंदड़ी पर चिकनाहट का आ जाना ही प्रश्नवाचक चिन्ह बन जाता है कि तुम्हारी चूनरी चिकनी क्यों कर हुई ? वह भी सीधा और स्पष्ट उत्तर देती है कि रायजादा वर या रायजादी वधू के तेल चढ़ाने के कारण ही चूनरी चिकनी हो गई है।

पीठी के गीत

–१–

मगरे रा मूंग मंगाओ ए , म्हारी पीठी मगरे चढ़ावो ए ।
म्हारी तेलण आमण लायी ए, तेलण तेल घड़ो भर लायी ए ।
म्हारी मालण आमल लायी ए, मालण चम्पो मरवो लायी ए ।
चंपै री चौसठ कलियां ए, बनो पूरी ठान री रलियां ए ।
बनड़े रे हाथ पतासा ए, बनो करे बनी सूं तमासा ए ।
बनड़े रे हाथ में डोरी ए, बनड़े से बनड़ी गोरी ए ।
बनड़े रे हाथ में कूंची ए, बनड़े से बनड़ी ऊंची ए ।

–२–

म्हारी हल्दी रो रंग सुरंग निपजै मालवै ।
हल्दी मोल पसारी री हाट, बनड़े रे सिर चढ़े ।
चिरजीवौ रायजादै रा बाबा जी चतर सुजाण हल्दी मालवे ।
थांरी माता रे मन कोड घणा करे ।
म्हारी हल्दी रो रंग सुरंग निपजै मालवै ।

इस गीत को आगे काक्यां, माम्यां, भाभ्यां आदि के नाम के साथ बढाकर गाया जाता है।

–३–

रामचन्द्र जी पूछे बालमियां
थांरी चूदंड़ चीकट क्यों रे हुई।
रायजादा रे तेल चढ़ावण ता
मारी चूनड़ ची कट यूं र हुई।

इस गीत में भी आगे स्त्रियां गौरनों के पतियों के नाम के साथ गीत जोड़कर गाती हैं।

–४–

सुन २ रे उदयापुर का तेली
थारी धाणी केशर ने कस्तूरी।
मांय घालू जायफल ने जावित्री
औ तेल फूल बना के अंग चढ़सी।
दमड़ा वांरा दादा सा भर देसी
लेखो वांरा दादी सा उर लेसी।

–५–

मारी गांठ गंठीली हल्दी बहुत रसीली, निपजै औ बालू रेत में।
मारी गांठ गंठीली हल्दी बहुत रसीली, निपजे औ मांजल मालवे।
वे तो बना रा दादासा गिया गुजारातां, कून मारे हल्दी मोलवे।
वे तो बना रा काकासा गिया गुजरातां, कून मारे केशर मालवे।

उपर्युक्त गीत तेल चढ़ाते समय गाये जाते हैं। मूलतः राजस्थान में वर या वधू को तेल चड़ाने और पीठी करने की प्रथा प्रत्येक वर्ण में पाई जाती है। पीठी करने से वर या वधू का रंग जरा खुल कर निखर जाये त्वचा सुकोमल और सुन्दर दिखाई दे वैसे स्वास्थ्यवर्धन ओर अंगसौष्ठव का गुण भी पीठी में माना जाता है।

बड़ा बान

छोटे बान के पांच अथवा सात दिन पश्चात् बड़ा बान या विनायक का समारम्भ विशेष धूम-धाम से होता है। प्रातःकाल वर-वधू के तेल चढ़ाया जाता है। कहीं-कहीं पर उससे पहले रातीजगा होता है। तेल चढ़ाने वाली सुहागिन-स्त्रियां गौरनी कहलाती हैं। तेल चढ़ाने वाली स्त्रियां अपने-अपने पतियों का नाम ले लेकर गीतों की स्वर लहरी पर झूमती हुई तेल चढ़ाती हैं। गौरनियां दूर्वा को दोनों हाथ में लेकर उसे तेल में भिगोकर बायें हाथ पर सीधा रखकर तेल चढ़ाती हैं। प्रथम मस्तक, फिर मुख, वक्ष, दोनों घुटने फिर दोनों चरणों को क्रमशः सात-सात बार स्पर्श किया जाता है। तेल चढ़ने के उपरान्त पीठी द्वारा उबटन किया जाता है तब पीठी तथा तेल के गीत गाये जाते हैं। उबटन के बाद स्नान आदि करके स्वच्छ वस्त्र पहिनाये जाते हैं। फिर मायां में पूजन के लिये ले जाया जाता है। बड़े विनायक के दिन ये कार्य विशेष रूप से किये जाते हैं।

१. चौक में लाल वस्त्र, मूंग और कोरे दीपक की तणी बांधी जाती है।

२. गणेशजी के चित्र तथा कलश के कुमकुम की सात टीकी दी जाती हैं।

३. कांकण डोरड़ा बनाये जाते हैं। डोरड़े बहुधा लाल रेशमी वस्त्र अथवा मोली (लच्छा) को बँटकर तैय्यार किये जाते हैं। उसमें एक कौड़ी, एक लोहे की बींटी, एक लाख की बींटी तथा लाल वस्त्र में नमक तथा राई बांध देते है। इस प्रकार कांकण डोरड़ा तैयार किया जाता है।

४. कांकरण डोरड़ा वर के दायें हाथ और दाये पैर में बांधा जाता है। वधू के बायें हाथ और बायें पैर में बांधा जाता है।
५. इस दिन से वर तथा वधू को खाटा खटाई और मिर्ची आदि खाने का निषेध कर दिया जाता है।
६. इस दिन से बियारणा गाना आरम्भ हो जाता है जो निकासी तक चलता है। आज से ही गरणपति की पूजा के बाद विनायक गाना बन्द कर दिया जाता है।
७. पूजन के समय वर या वधू के माता पिता भी बैठते हैं।

अन्य शेष क्रियायें छोटे बान अथवा विनायक के अनुरूप ही होती है। इस दिन से वर-वधू की बिन्दोरी निकाली जाती है। जिसमें धूम-धाम और चहल-पहल की सीमा अनुपम तथा अपूर्व रहती हैं। बिंदोरी में नारी कण्ठ मधुर गीतों से जनपथ को गुंजाते रहते है। वर तथा वधू को लोहे का चाकू या अस्त्र दे दिया जाता है। अब उनके यत्र-तत्र भ्रमरण का निषेध कर दिया जाता है।

बड़े बान को संध्याकाल में प्रथम ब्राह्मरण बिंदोरी का आयोजन होता है। वर तथा वर के आचार्य या पण्डित के यहां मांगलिक चांवल बनाये जाते हैं। तब बिंदोरी निकाली जाती है। बिंदोरी बाजार में ढोल बजाकर गाजे-बाजे के साथ निकाली जाती है। अग्रवालों में वधू की इस बिंदोरी को मोल्या चूंदड़ी की छांह में निकाला जाता है। वर की बिंदोरी सुसज्जित घोड़ी पर निकलती है। इसमें वर के साथ विनायकड़ा भी बैठता है। बिंदोरी में परिवार की स्त्रियां गीतों की स्वर लहरी से जनपथ को गुंजित करती हुई पीछे-पीछे चलती हैं। यह क्रम निकासी तक चलता रहता है।

बियाणी-गीत

बड़े बान के दिन से प्रातः काल सूर्योदय के पूर्व ही बियाणा गीत गाना प्रारम्भ हो जाता है। प्रातः काल वर अथवा वधू को घी बतासा पिलाया जाता है। इन गीतों को जागरण गीत भी कहा जा सकता है। इन गीतों में, तारा, सूरज, मेंहदी, हथनी, धर्म का वीरा, धर्म की चून्दरी, कूकड़ा, आदि गीत गाये जाते हैं।

उठ राणां उठ राजवी
थें तो उठोजी काश्यप जी रा जोध बियाणा।
थें तो उठोजी महादेव जी रा जोध बियाणा।
ओ राजा बलियाणा।
था घर सूता न सरे
थांकी नगरी में ओ राजा आणन्द उछाह बियाणा।
ओ राजा बलियाणा।।

इस गीत में आगे घर वालों के, बेटे तथा पोते का नाम लेकर गीत को आगे बढ़ा कर गाया जाता है।

हथिनी

हथणी चाले जी मुलकती बड़ा शहरा रे मांय।
मोटा शहरा रे मांय, २ कुमकुम रज उड़े ।।टेर।।
मैं थांने पूछूं सूरज जी में थांने पूछूं महादेवजी।
कठे थारे रहन को वास, केसरवर्णीजी रज उड़े।।
गढ़ (नाम) रली आवनो, गढ़ कैलास रली आवणो।
वठे मांका रहन का वास, जास्या कैलास की जात।।
केसरवर्णी जी रज उड़े, कुमकुमवर्णी जी रज उड़े।।

जैनियों के यहां बियाणों के स्थान पर सपने गाये जाते हैं जिसका एक उदाहरण निम्नलिखित है इनमें उनके २४ तीर्थंकरों के संकेत हैं।

सपना

म्हाने सपना दीठा, अरज सुन लीजो म्हारा बालमा।
पहले गजवर देखियासरे, दूजे वृषभ सुलाख।
तीजे सिंह सुलक्षणो सरे, चौथे लक्ष्मी देवीजी ।।१।।
युगल माल फूल की सरे, छठे देखी प्रकाश।
सातवें सूरज देखिया सरे, आठवें ध्वजा पतंग ।।२।।
नवमें कलश रत्ना जड़्यो सरे, दसमें पद्म सरोवर।
क्षार समुद्र ग्यारहवां सरे, बारहवें देव विमान जी ।।३।।
रत्नारी राशि तेरहवां सरे, अग्नि शिखा बहु तेज।
नाभि राज ने पूछता सरे, अर्थ दियो फर्माय जी ।।४।।

कूकड़ा

जीओ पो फाटी दिन उगियो, जीओ देवतारी लागी जगा जोत।
आंगण बोल्यो कूकड़ो जी ।। टेर।
माता मरूदेवी बुलायो बोल्यो कूकड़ो,
माता अचला देवी बुलायो बोल्यो कूकड़ो।
जीओ ऋषभदेव छोड़ी ढीली डोर,
जीओ शान्तिनाथ छोड़ी ढीली डोर।
आंगण बोल्यो कूकड़ो।

सूरज

डूगंरिया री खिड़क्यां सूरज भल उगिया।
पोढ्या जागो ओ काश्यप जी रा जोध।
सूरज भल उगिया ।। टेर ।।

पोढया जागो ओ महेश जी ओ आप।
सूरज भल उगिया ।। टेर ।।

इस गीत में आगे काश्यप जी रा जोध के स्थान पर घर के बुजुर्गों के नाम लिये जाते हैं तथा गीत को दोहराया जाता है।

घीमरी

घी पी म्हारा अथ : लाडा ओ घी पी
थारी मायड़ पावै, डोर हलावे, हमसे रलिया रास करै
मंजीरा बाजै, नरगु बाजै ।
वेल्या शबद सुनावे ।
पाड़ोसन मंगल गावै ।
घी पी ....

आगे मां, बहिन, मामी आदि के नाम लिये जाते हैं।

इस गीत के साथ साथ लाडा या लाडी को घीं में बतासे को डुबोकर स्त्रियां क्रमशः मुंह में देतो जाती हैं तथा गीत गाती जाती हैं। यह क्रम निकासी तक चलता रहता है।

बना-बन्नी के गीत

विवाह के गीतों में घोडियां या सेवरा और सुहाग अथवा कामण गीत उल्लेखनीय है। घोडियाँ (घोडी के गीत) 'वर' के घर गाये जाते हैं और सुहाग 'कन्या' के घर। संगीत की दृष्टि से भी इनमें बहुत भेद रहता हैं। विवाह के बहुत दिन पूर्व 'कम हाथ' लेने के बाद से ही स्त्रियाँ वर व वधू के घर में घोडियाँ और कामण गाना प्रारम्भ कर देती हैं।

राजस्थान में वर को 'बन्ना' या बींदराजा तथा वधू को 'बन्नी' या बींदणी कहते हैं। विवाह के अवसर पर, बन्ने बन्नी के गीत सैकड़ों की संख्या में स्त्रियां गाती हैं। बन्ने 'वर' के घर विवाह कार्य प्रारम्भ होने से लेकर 'निकासी' तक गाये जाते हैं और 'बन्नी' गीत फेरे या भांवर पड़ने के पूर्व तक।

यहाँ पर कुछ चुने हुए घोडी, सेवरा तथा बन्ना बन्नी के गीत प्रस्तुत हैं।

घोड़ी

: १ :

नीलड़ी मारी नवल बछेरी चरज्ये राजा सा रे बाग में।
पाछी मोड़ो सा राइवर का दादासा मतरे उजाड़ो हरिया बाग ने।
पाँच रुपया देउं रे माली का चरबा तो दे मारी नीलड़ी।
कांई करूं सा आपका पांच रुपयां मारो बिगाड़ो केशर केवड़ो।

: २ :

राइवर उतरी बाग में ये माँय
अे मैं किस विध देखन जाऊँ अे बालक की घोड़ी।
पडला लेलूं हाथ में ये माँय
अे मैं बजाजी री बेटी बन जाऊँ अे बालक बींद की घोड़ी।
गहना ले लूं हाथ में ये माँय
अे मैं सोनिड़ा री बेटी बन जाऊँ ऐ बालक बींद की घोड़ी।
बिड़ला लेलूं हाथ में ये माँय
पनिया लेलूं हाथ में ये माँय
ऐ मैं तंबोली री बेटी बन जाऊँ ऐ बालक बींद की घोड़ी।
अे मैं मोचिड़ा री बेटी बन जाऊँ....

: ३ :

ओवरा में ओवरो जी माये घोड़ी रो ठांण
जी दाल चावे दलियो चावे नीरे नागर बेल
दादासा ओ घोड़ी लेदो मोल सा फेर सवेरे जास्यां परणबा ।
सासरिया में सावा बंदया काम में वेगोई तोरन मारस्या ।

: ४ :

इंदरियो घररायो अे घोड़ी, मंदरी मंदरी चाल ।
चौमासो लग गयो अे मंगेजण, हलवां हलवां चाल ।
थारो बाबो जी मोलावे अे घोड़ी, माऊ जी निरखण आय ।
थांरो काकोजी मोलावे अे घोड़ी, काकीजी निरखण आय ।
मंगेजण धीमां धीमां चाल....

इसी प्रकार इसमें घर के दादोजी, नानोजी आदि का नाम देकर गीत बढ़ाया जाता है।

: ५ :

घोड़ी चतर सुजाण हे म्हांरे लाड़ा रे मन भावै
अेक चालै मधुरी चाल, सुहावै म्हारी तेजण खड़ी रै सुहावै ।
हीर जड्यो मोती वालो सोवै, सिर सेली वालो हीर जड्यो
मुख कबडालो रतन जड्यो
कठे कियो सिणगार, अे म्हाँरे कठे रूप बखाणियो
अेक मथरा प्यारे सज्यो सिणगार, म्हारे गोकल रूप बखाणियो
अेक करे आरती बाई सोदरां
बाई, थारो बीरोजी परण घर आयो
बाले सर मोतीडां बधारियो

: ६ :

घोड़ी रा हुरे खुरे बांजना
घोड़ी मेंदी लगाई बनी पूछे हो ।

प्यारा लाडला घोड़ी कठां सूं मंगाई
म्हारे दादोसा रे देश, घोड़ी बठा सूं मंगाई।
चढो चढो प्यारा लाडला-
घोड़ी अधरे नचाई।
चम चम प्यारा लाड़ला देखूं चतुराई।
खूब बन्यो प्यारा लाडला
घोड़ी अधरे नचाई।
खूब बन्यो प्यारा लाडला
सगलो शहर सराई,
आगे बना सा री घोरड़ी
लारे लोग लुगाई
घोड़ी अधरे नचाई।।

: ७ :

तूं तो चाल घोड़ी चाल
म्हारा दादोसा रे घर चाल।
मैं तो नहीं चलूं महाराज
म्हारे घरां घरां रा आगण
घोडी चरे चना की दाल
रायवर जीमे ऊजला भात
बना सा रथ मेल्या सिंगार
बनड़ी ऊभी जोवे बाट
तूं तो चाल म्हारी घोडी
मंदरी - मंदरी चाल।

: ८ :

घोड़ी बांधो अगर रे रूंख चंदरण रे रूंख।
मोड़ दरवाजे चंपे री दोय कलियां रे।

घोड़ी चढ़ता वसुदेव जी रो नन्द पून्यो रो चन्द
हीरा रो हार मथुरा जी रा बासी ने
धन-धन हो गोरा श्री कृष्ण केसरिया कंवर
थांरे सेवरो बंधावां रे ।

सेवरा

: १ :

राज ! नन्दन वन की चार कामड़ी दो सूखी दो आली राज ।
कूंनिसा रा कंवर कहिजे कूनिसा रे सिर सोवे राज ।
राजा दशरथ रा कंवर कहिजे रामचन्द्र सिर सोवे राज ।
गूंथ लाये मालन सेवरो, शाहजादा न सोवे सेवरो ।
बालक बनड़ा न सोवे सेवरो ।

: २ :

नदी रे किनारे राइये चम्पेली, कंवर किनारे मरवो मोगरो ।
वे तो आतारा तोड़या राइये चम्पेली, जातारा तोड़या मरवो मोगरो ।
आप तो बरजो न दादासा पोता तुम्हारा, घूम मचायी सा मारा बाग में ।
थाने बांधबा का पेचा देवाए मालण का–
सेल करबा दो ये हरिया बाग में ।

: ३ :

ऊँची सी मेंड़ी रावटी में माली को सौवे ग्रे नचींत ।
म्हारे रे रंग बनडे रा सेवरा ।
म्हारी मालण जाय जगावियो, माली तू क्यों सौवे है नचींत ।
म्हारे लाडले बनड़े रा सेवरा ।
नगरी कुंवारा परणासी, म्हारे नवल बने रो ब्याह
चोखा सेवरड़ा गून्थ ल्याय ।

माली तो उठियो छोयलो बैं तो मोली है लांबी सी खिजूर·····
नँरे पंखो तो लाग्यो खिजूर को और नाल जे बोत सरूप·····
कागद लाग्या मुड़मुड़ा और पाट अंठारा टांक·····म्हारे·····
सोनूँ तो लाग्यो सोवणू और रूपो उजल दंत····· ····· ····· ·····
उड़ती तो लागी चिड़कली और गढ़ परवत का मोर····· ····· ·····
मोती तो लाग्या वाटला और लाल लगी लाव च्यार ····· ····· ·····
सिर भर मालण निसरी, हर भर हटवाड्या रे माँय····· ····· ·····
लोग महाजन पूछियो रे, तूं मालण कित जाय ····· ····· ·····
कंवर असिर का ही सेवरा, म्हें तो घर विरमादतजी रे जाय
पूत सपूती आगेड़ी बहू सांवत दे लियो है मोलाय····· ····· ·····
लाय धर्‌या सामी साल में कोई चार देखो रखवाल ····· ····· ·····
दादी तो भुवा भाभी, ग्रे तेरी जणी ग्रे सहोदर माँय ····· ····· ·····
म्हारे रंग बनड़े रा सेवरा।

: ४ :

जी माली थारा बाग में दादासा बायी भाँग
भाँग भाँग दादासा पीग्या लार रेग्या फूल
जी उमराव बनासा गजरा गूंथा इर बनिसा रे भेजदो
जी सरदार बनासा सेवरा गूंथा यर सिर पर टांगलो।

सुहाग तथा कामण

: १ :

कोरी कोरी कूलड़ी में दहियो जमायो राज।
आज मारा राइवर ने दादासा घर नूत्या राज।
दादासा तो नूत्या राइवर दादी नूत जिमाया राज।
हरी कूकड़ी नीलो सूत बांधो जी सासूजी रा पूत

बांध्या सूंघ्या करो सलाम एकरी सलाम माई दूसरी सलाम
तीसरी सलाम थांका बाप का गुलाम
छोड़ ये दादासा री प्यारी अब तो कामण होग्या राज
कामण सा तो पेली केता अब तो गाठा गुलग्या राज ।

: २ :

बना काकड़ आया विराजा सा गज कामणियां ।
काकासा ने करोड़ बाधू मामासा ने मरोड़ बांधू,
हाथो तो हजार बांधूं, घोड़ा तो पचास बांधूं ।
घोड़ी से तो बींद बांधूं बना बांधूं गोत गुडुंबो सा गज कामणियां ।

: ३ :

माका राइवर आया ये हल पर बैठ जीमाया छै
पूछा जी लाडी की मायड़ थे भी कामण जाणो छो ।
नई भई भई करता जाई करड़ा कामण करता जाई ।

: ४ :

बनी गई वांरे माताजी के पास देओ माताजी अमर सुहाग ।
ओरां ने देऊं बाई पुड़ी ये बंधाई, थाने कंवर बाई छाब भराई ।
पुड़िया रो सुहाग माताजी उड़ २ जाय छाब भर्‌यो मारो अमर सुहाग।

: ५ :

लाडी की मायड़ दाल दलो न उड़दा की, थे उड़द मूंग सब
दल लो सुहाग कामण करलो ।
वे कामण लाग्या अल्ल, सुहाग लाग्या पल्ल ।

*

बन्ना

: १ :

बना सा ने पेचा सोवे ए
अमां ए तुररा री छिब न्यारी
बना सा ने आबा दीजो ए
बनो हूँडी वालां रो ए
बनो सिली वालां रो ए ।। टेर ।:

अमां ए अणियारी री आंख्या रा
बना सा ने आबा दीजो ए ।।

बना सा ने मोती सोवे ए
अमां ए डोरा री छिब न्यारी
बना साने आबा दीजौ ए ।
अमां ए उजली बत्तीसी
बना सा ने आबा दीजो ए ।।

बना सा ने भात्या सोवै ए
अमां ए घड़ियां री छिब न्यारी
बना सा ने आबा दीजो ए ।।
अमां ए पतली कमरयां रा
बना सा ने आबा दीजौ ए ।
बनो हूंडी वालां रो ए
बनो सिली वालां रो ए ।।

: २ :

हँसती तो थे ल्याओजी बना
घुड़ला तो थे ल्याओजी बना
हँसत्या रा हलकै पधारोजी बना

घुड़ला रा घूमर आओजी बना
दल-बादली से पाणी कुण भरै।
म्हैं भी भरियां जी म्हांकी सहल्यां भरे
सेलीवाला सा बना आड़ा आड़ा ही फिरे
दल बादली रो पाणी कुण भरै ।।
पड़लो तो थे ल्याओ जी बना
पड़ला में सब रंग ल्याओ जी बना
दल-बादली रो पाणी कुण भरे ।।
चूड़लो तो थाँ ल्याओ जी बना
चूड़ला रे तकस दिराओ जी बना
दल-बादली रो पाणी कुण भरै ।।
सोनो तो थाँ ल्याओ जी बना
चाँदी तो थां ल्याओ जी बना
बनड़ी रे अघड़ घड़ाओ जी बना
दल-बादली रो पाणी कुण भरै ।।
मेवो तो थाँ ल्याओ जी बना
बनड़ी री गोद भराओ जी बना
दल-बादली रो पाणी कुण भरै ।।
बिड़ला तो थाँ ल्याओ जी बना
बनड़ी रा होठ रचाओ जी बना
दल-बादली रो पाणी कुण भरै ।।
जानी तो थां ल्याओ जी बना
जान्यां री जोड़ लगाओ जी बना
दल-बादली रो पाणी कुण भरै ।।
बनड़ा तो थां आओ जी बना
बनड़ी ने परण पधारो जी बना
दल बादली रो पाणी कुण भरै ।।

: ३ :

हँसती तो थां ल्यावजो जी
हँसता रे हलकै पधारो जी
नवल बना,
आवै छ लपट थांमें अन्तर री।
बना अन्तर री रे चमेली री
गंधन री जै लहरां लेता आओजी बना
आवै जी लपट थांमे अंतर री।

(आगे ऊपर के गीत के अनुसार ही घुड़ला, चुड़ला, सोना, बिड़ला, बराती आदि के नाम ले लेकर गीत को बढ़ाकर गाया जाता है।)

: ४ :

हंसती तो कजली देसां री लाज्यो जी
घुड़ला तो पारस देस रा लाज्यो
वाहरण रे भलके आओ जी बनड़ा
करवाँ रे रलकै आवो जी बनड़ा।
बनड़ो बूझे ए म्हारी बनड़ी
के गुण पायो भरतार, जी बनड़ी
के गुण पायो भरतार, जी बनड़ी।
चार बज्याँ मैं सोती उठती
गीता रो करती पाठ, जी बनड़ा
थारे तो खातिर कातिक न्हाया
बरत कर्या सौ साठ, जी बनड़ा।
नौ दिन तो मैं कर्या जी नौरता
सोला दिन गणगौर, जी बनड़ा
पनराड़ी मैं ग्यारस करती
बारा करती चौथ, जी बनड़ा।

इतरा तो मैं जप तो ये करती
जद पायो भरतार, जी बनड़ा
जद पायो भरतार, जी बनड़ा ॥

: ५ :

बना रे, सोनो लंका देसरो सरे घर आणाँ
था री रे बनडी रे भंवर घडाय
बनी तो लागै प्यारी रे,
पुसबन की या सुगंध सवाई रे।
बना रे, रूपो ऊजल देस रो सरे घर आणां
थारी, रे बनडी रे पायल घड़ाय
बनी तो लागै प्यारी रे,
पुसबन की या सुगंध सवाई रे।
बना रे, मोती हर समदां पार रा सरे घर आणाँ
थारी रे बनड़ी रे हार पोवाय
बनी तो लागै प्यारी रे,
पुसबन की या सुगंध सवाई रे।
बना रे, सालू सांगानेर रा सरे घर आणां
था री रे बनडी रे किरण लगाय
बनी तो लागै प्यारी रे,
पुसबन की या सुगंध सवाई रे।
बना रे, चूडलो हसती दांत रो सरे घर आणां
था री रे बनडी रे बांय पैराय
बनी तो लागै प्यारी रे,
पुसबन की या सुगंध सवाई रे।
बना रे, बनडी घण परवार री सरे घर आणाँ
जोड़े सूं महल पधार

बनी तो लागै प्यारी रे,
पुसबन की या सुगंध संवाई रे।

: ६ :

म्हाँरे बनडे ने किसड़ो मिलियो सासरो
म्हाँरे रे रंग बनडे ने मन भाय।
अे जी किसड़ो मिल्यो रामचन्दर ने सासरियो
किसड़ी सालां री जोड़ ।।
सुरंगो मिल्यो छै म्हारे लाड़ले ने सासरो
सखियाँ सालां री जोड़
म्हारे बनडे ने किसड़ों मिलियो सासरो
म्हांरे रंग बनडे ने मन भाय ।
किसडी मिली म्हांरे रंग बना ने सालियां
किसडी मिली घर नार
डावर नैणो मिली म्हांरे बनडे ने सालियाँ
चंदा बदणी घर नार ।
किसडो मिल्यो लाड़ले न सुसरोजी
किसडी मिली अेक सास

(७)

डूंगर ऊपर डूंगरी सा बना जापर दाखा रो रूंख,
दाख तले होयर निसर्याजी बना अटकी घोड़ा री लगाम ।
छोड़ो राइवर छेवड़ो सा म्हारा दादा सा देख सा राज,
दादा सा देख तो कई करूं ये बनी पंचा में पकड़्यो छ हाथ ।
पञ्चा में पकड़्यो तो कई करूं सा बना जान जिमाई म्हारा बाप,
जान जिमाई तो कई करा सा बना रस्ता में चाल्या सारी रात ।
रस्ता में चाल्या तो कई करा सा, डायजो दियो म्हांका बाप ।।

(८)

बनी ये थारा दादा सा रा महल, पानाये फूला छाविया सा ।
बनी ये आवेली राईवर की बारात, सवायो लागे बारणोजी ।
बनासा घुड़ला ने धीरा मन्दरा छोड़ो, पाड़े सा म्हारो आंगनो ।
बनी ये सिलावट रो बेटो म्हारी साथ, आंगन कांच बिड़वसा ये ।

पिछले तीन बन्नों में दादा सा के स्थान पर काका सा मामा सा, फूफा सा आदि लगा कर गीत को आगे बढ़ा कर गाया जाता है ।

इसके अतिरिक्त राजस्थानी महिलाओं ने आधुनिक युग के अनुकूल भी सैंकड़ों बन्ने बन्नी बना लिये है जिस पर हिन्दी का प्रभाव है । उदाहरण के रूप में कुछ बन्ने प्रस्तुत हैं—

(९)

बन्न गहना तो आप लाय, बाग में आना,
बागों में क्या क्या चीज, मुझे बतलाना ।
बन्नी कच्चे दाड़म दाख, उसे मत तोड़ो,
वे रम रहे दादर मोर, उन्हें मत छेड़ो ।
बन्ना रस्ते में लग रही भूख, होटल पर चालो,
लगवा दो कुरसी मेज, चाय मंगवा दो ।
बन्ना चाय बड़ी अकराल, बिस्कुट मंगवा दो,
नाखून में हो रहा जहर, चम्मच मंगवा दो ।

(१०)

भोजन बनाया हो बना, जीमन के वास्ते
हो जीमन के वास्ते ।
जीमन के पहले तो बना, इनकार कर दिया ।
गांधी ने हिन्दुस्तान को आजाद कर दिया ।
जिन्ना ने पाकिस्तान को, बरबाद कर दिया ।

नेहरू ने लेक्चर देने में कमाल कर दिया ।
इन्दिरा ने शासन करने में, कमाल कर दिया ।

बन्नी

(१)

बन्नी सा रा माथा ने मेंहमंद सोवें ।
रखड़ी पर ए, भूटना पर ए
राइवर रीझै ये लडवण गहरी घूमर घाले ।।
थे तो हिंडोजी कँवरबाई हिंडो,
नाचण रो ये, हरमल रो ये,
झोटा देवे ये लडवण गहरी घूमर वाला ।
लाडी सा रा चाँद पोल दरवाजा
तख्ता पर ये, तख्ता ये
थारी सासू नाचै ये लडवण गहरी घूमर वाला ।

(२)

बन्नी तेरे आंगन में फूलों की बहार है ।
फूलों ही का टीका हैं, फूलों ही के किलिफ हैं
फूलों का ही जूड़ा तेरे माथे का सिंगार है
फूलों ही के एरिंग है फूलों के ही टोप्स हैं
फूलों ही के कुण्डल तेरे कानों का सिंगार है ।

उपर्युक्त दोनों गीतों में विभिन्न अंगों तथा उन पर पहने जाने वाले गहनों का नाम लेकर गीत को आगे बढ़ाया जाता है ।

(३)

गहनो तो आप लावजो सा, गहना में रतन जड़ाय
ऐ उदियापुर री तंबोलन बन्नी सा ने बिड़ला चबाय

काथों तो चूनो, एलची सा
असल नागौरी पान ।
ये बीकानेर री तंबोलन बन्नी सा ने बिड़ला चबाय ।।
पडलो तो आप लावजो सा, पडला में सब रंग लाय ।
अे उदियापुर री तंबोलन, बन्नी सा ने बिडला चबाय ।
कतर कतर बिड़ला कर्या सा ।
चाबो न चतर सुजान ।
अे सांगानेर की तंबोलन बन्नी सा ने बिड़ला चबाय ।।

(४)

सुनो र दादासा बाई री बिनती, सुनजो चित लगाय ।
सुनो र काकासा बाई री विनती सुनजो चित लगाय ।
सांचा मोती सू मांडो छावजो तड़के आवेली बरात ।
हीरा मोती सू मांडो छावजो तड़के आवेली बरात ।
जेठ घुड़ला सा सुसरा पालकी देवर खुरीय रलाय ।
राइवर तो हस्ती चढ्या, जापर चॅवर ढुलाय ।

(५)

दादा सा के बागों में जाय के, कच्ची कलियां तुडइयो मोरी लाडली
काकासा के बागों में जाय के, कच्ची कलियां तुड़इयो मोरी लाडली
कलियां तुड़वाकर बाग से तेरी चुनरी रंगाइयो मोरी लाडली
पंचरंगी चूनर ओढ कर, सुसराल घर जाइयो मोरी लाडली
सुसराल के आंगन नीमड़ी जरा झुक झुक जाइयो मोरी लाडली
सासु है तुम्हारी रानियाँ, वे सहज ही देगी गालियाँ
उससे लड़ मत आइयो मोरी लाडली ।

(६)

चांदा बाबा सा चांदनी सी रात, जी कोई चांदा रे उजाले लडवरा निसरी
जाज्यो बाबा सा देश परदेश, जी कोई म्हारी जी जोड़ी रा राइवर हेरजो

गिया ये बाई देश परदेश, जी कोई थाकीजी जोड़ी का राइवर न मिल्या ।
झूठा बाबां सा झूठ मत बोल जी कोई मांकी जी जोड़ीका उदयपुर शहरमें
वे छ बाई मोटा सरदारजी कोई दूणो जी क डेढ़ो मांग डायजो
कोई सामी जी क मांग बाई री खीचड़या ।
आप छो दादासा मोटा उमराव जी कोई दूणोजी क दीजो बाई न डायजो ।
कोई सामीजी क दीजो बांई ने खीचड़या ।

(७)

सरवर पर बंगलो, बंगला में पोढ्या राइवर एकला ।
तू तो जाये चम्पा दासी, जाये जगाजे म्हारा श्याम ने ।
तू तो जाये हीरा दासी, जाय जगाजे म्हारा श्याम ने ।
मैं किण विध जाऊं सा, वे तो सूता छे सुखभर नींद में ।
बन्ना कहां रह गया सा, रात्यू नहीं आया बन्नी सा रा महल में ।
बन्नी बाग गया अे, माली नहीं सींचो हरिया बाग ने ।
बन्नी केलो कुम्हलायो, जल बिन कुम्हलायो फूल गुलाब को ।
बन्ना बन्नी कुम्हलाई सा, रात्यूं नहीं आया बनिसा रा महल में ।

जिन गीतों बाबा सा, काका सा से गीत आगे बढ़ता है उन्हीं में मामा सा, फूफासा, मासा सा, वीरा सा आदि लगा कर गीत को बढ़ा कर गाया जाता है ।

(८)

चढ़ चौबारां अे नवल बनी चढ़ चौबारां अे
हाँ, अे तू तो देख सूरजमल रो रूप
नवल बनी चढ़ चौबारां अे ।

लाज आवे जी नवल बना लाज आवे जी
ओ जी म्हारो देखे बाबा सा रा लोग
नवल बना लाज आवे जी

लाज क्यां की अे नवल बनी लाज क्यां की अे
ओ अे थांको पंचा में पकडूं हाथ
नवल बनी लाज कांकी जी ।

इस गीत को काका, नाना, मामा, ताऊ आदि का नाम लेकर प्रश्नोत्तर रूप में आगे बढ़ाया जाता है।

६

माथा नै महमद पहर ल्यो ए
झुटना रतन जडाय
ओ बीकानेर की तंबोलन
बनी सा नै बिडला चबाय ।

काथो तो :चूनो एलची ए
सोना बरण बरख लगाय
ओ बीकानेर की तंबोलन
बनी सा ने बिडला चबाय ।

मुखडा नै बेसर पहर ल्यो ए
हिवडा नै हाँसल पहर ल्यो ए

तिलडी पाट पुआय
ओ बीकानेर की तंबोलन
बनी सा गे बिडला चबाय ।

पूंच्या नै चूडलो पहर ल्यो ए
नजरां सूं मजरा लगाय
ओ बीकानेर की तंबोलन
बनी सा नै बिडलां चबाय
पगल्या नै पायल पहर ल्यो ए
बिछिया पायल घडाय
ओ बीकानेर की तंबोलन
बनी सा नै बिडला चबाय ।

(१०)

म्हें तो आया जी बन्नी थाके पावणाजी
म्हाने जाजम दो बिछाय
म्हाने सतरंज दो बिछाय
म्हां की खूब करो मनवार
म्हे तो आया जी, बन्नी थांके पावणाजी ।

(११)

बागा में बंगला चुनाय, सड़क ऊपर दरवाजा सा ।
कीजो बनी रा दादासा ने जाय, बन्ना तो परणे दूसरी सा ।
हाथा में हरियो रुमाल, पावां की मेहन्दी राचणी सा ।
उजली बत्तीसी लम्बा बाल, भल ही परणो दूसरी सा ।
मालवा री परणो दो अर चार, मेवाड़ी लाडी एकली सा ।
मालवा री परणो दो अर चार, हाड़ोती लाडी एकली सा ।

वीरा

(१)

कठे सूं आई सूंठ कठे सूं आयो जीरो,
कठे सूं आयो अे थारो जामन जायो वीरो ।
कोटा सूं आई सूंठ, बूंदी सूं आयो जीरो,
ब्यावर सूं आयो अे म्हारी माँ को जायो वीरो ।
क्यां में चावै सूंठ, क्यां में चावै जीरो,
क्यां में चावे अे म्हारो जामन जायो वीरो ।
जापा में चावै सूंठ, छमकवा में चावे जीरो
मायरा में चावे अें म्हारी माँ को जायो वीरो ।
क्यां में आई सूंठ, क्यां में आयो जीरो,
अो क्यां में आयो ए म्हारो जामन जायो वीरो ।

गाड़ी में आई सूंठ, थेला में आयो जीरो,
मोटर में आयो ओ म्हारी माँ को जायो वीरो।
कठे उतारूँ सूंठ, कठे उतारूँ जीरो
कठे उतारूं ओ थारो जामन जायो वीरो।
माल्या में उतारो सूंठ, पोल्या में उतारो जीरो
महलां में उतारो ओ म्हारी माँ को जायो वीरो।
ढ़ुस भई सूंठ और बिखर गयो जीरो।
रूठ गयो ए म्हारी माँ को जायो वीरो।
सार लेसूं सूंठ, बुहार लेसूं जीरो
मनाय लेसूं ओ म्हारी माँ को जायो वीरो।

(२)

वहू ऊबा ओवरिंये रे द्वार सुसरा सा मोसा बोलिया
ओ सायर वीरा-
वहू पेरो न घर को जी वेश वीरा रे घर री कांचली
ओ सायर वीरा।
सुसरा सा मत वोलो आडा टेडा बोल, वालक छे मारा वीर
बूढ़ा सा माय र बाप, रस्ता में रेग्या रात
सबेरे देस्या मायरो ओ सागर वीरा।

सुसरा सा के स्थान पर जेठसा देवरसा आदि लगाकर गीत को बढ़ाकर गाया जाता है।

(३)

मारी छाब भरी जी छोका नारेला।
मारी आज बत्तीसी मार दादा सा रे घर दीजो।
मांरी सैया, जामन को जायो उल्टयो।
मारा दादा सा से मिलता जी हिवडो उबक्यो।
मारी दादी सूं मिलता नैन झलामल लाग्या, मारी सैंया जामन

(४)

लाड्ड साधूंली मगद का वीरो नूतन चाली रे हुलरिया।
पेहली नूतूंली दादासा पछ दादी हमारो रे हुलरिया
नूतो झेलो न मान सूं।
वीरो नूतन आई रे हुलरिया।

(५)

वीरा साँ आया पण कहां गया
कठ रे लगायी इतरी बार रे मां का जाया।
बजाजी री दुकाना ए बाई मैं गिया।
चूँदडी मुलावतां लागी देर ये जामन जायी।
वीरा सा आया बरसे बादली। भावज आया चमके बिजली।

(१)

उड वायसड़ा म्हारा पीयर जा
नूँत पियरा रा भातवी जे
मल नूंती रे म्हारी जलबलजामी बाप
रातादेई म्हारी माय ने जे
मल नूंतीं रे म्हारा कान्ह कंवर सा बीर
सैणां भतीजा भावजों जे
मल नूंती रे म्हारी जामण-जायी बैन
सैणाँ बनोई भांणजा जे
मल नूंती रे म्हारा काका बाबारी जोड़
काकी-बडियांरो झाझो झूलरो जे
ऊभी रे वीराँ छाजअिये री छाँह
देवर मोसो बोलियो जे
करती, अे भावज बीराँ रो गुमान
थारा पीर बत्तीसा भावज ले रह्या जे
मनड़ा में वीरा आयगी छे रीस

ले घड़लो सरवर गयी जे
सरवरियारी वीरा, ऊँची-नीची रे पाल
अेक चढ़ूँ दूजी उतरूँ जे।
झीणी-झीणी रे वीरा उड़े छे खेह
बादल दीसे धूँधला जे
वालदाँ री, रे वीरा बाजी छे राल
गाड चरखता म्हें सुण्या जे
म्हारे वीराजी रा चमक्या छे सेल
भावजां रा चमक्या चूड़ला जे
म्हारी बैनड़ली रा चमक्या छे वीर
भतीजाँ रा मोवन मौलिया जे।
थाँ कठे रा वीरा लायी छे पार
सगलाँसूँ पैली थाँने नूँतिया जे
औरां ने वीरा, नाई बामण की नूँत
थाँ ने नूँतण तो हूं गयी जे
औरा ने वीरा चावलियां री नूँत
थाँ ने नूँत्या गुड़-भेलिया जे
कै थारें, रे वीरा जलमी छे धीव
कै बड़गोतण भावज बरजिया जे
ना, बाई, म्हारे जलमी छे धीव
कै बड़गोतण भावज बरजिया जे
ना बाई म्हारे जलमी छे धीव
कै बड़गोतण भावज बरजिया जे
हम घर अे बाई जलम्यो छे पूत
रली अे बधावा हो रह्या जे
गया छा अे बाई भारतिये री हाट
थानी भारत बाई मोलवा जे

भारत रे वीरा भावज ने ओढ़ाय
म्हां ने घणमोलाँ री चुनड़ी जे
सुसराजी ने वीरा विरमो ओढ़ाय
सासूजी ने साड़ी साँपड़ जे
म्हारे जेठां ने वीरा साल-दुसाल
देवराँ ने पिचरङ्ग मौलिया जे
म्हारी ननद ने दिखणी रो चीर
देरान्या-जेठान्या रे पीला पोमचा जे

– २ –

आज म्हारा वीरो जी कांकड़ बस-रह्या
हरख्या छे ग्वाला जी लोग
ओढ़ायी घणदेवा चूनड़ी
आयो छे मा को जायो वीर
हीराँ जड़ ल्यायो चूनड़ी
ओढ़ूँ तो हीरा, रे वीरा झड़ पड़े
मेलूँ तो तरसे बाई रो जीव
ओढ़ाई घणदेवा चूनड़ी
आज म्हारा वीरोजी बागाँ बस रह्या
हरख्या छे माली जी लोग
ओढ़ायी घणदेवा चूनड़ी
आयो छे मां को जायो वीर
हीराँ जड़ ल्यायो चूनड़ी
ओढ़ूँ तो हीरा रे वीरा झड़ पड़े
मेलूँ तो तरसे बाई रो जीव
ओढ़ाई घणदेवा चूनड़ी
आज म्हारा वीरोजी सहराँ बसरह्या
हरख्या जे महाजण लोग
ओढ़ाई घणदेवा चूनड़ी

आयो छे मा को जायो वीर
हीराँ जड़ ल्यायो चूनड़ी
ओढ़ूँ तो हीरा, रे वीरा झड़ पड़े
मेलूँ तो तरसे बाई रो जीव
ओढ़ाई घणदेवा चूनड़ी
आज म्हारा वीरोजी पोलयां बस रह्या
हरख्या छे देवर-जेठ
ओढ़ाई घणदेवा चूनड़ी
आयो छे मा को जायो वीर
हीरा जड़ ल्याओ चूनड़ी
ओढ़ूँ तो हीरा, रे वीरा, झड़ पड़े
मेलूँ तो तरसै बाई रो जीव
ओढ़ाई घणदेवा चूनड़ी
आज म्हारा वीरा जी चोक्या बस रह्या
हरखी छे मा की जाय मात
ओढ़ाई घणदेवा चूनड़ी
आयो छे मा को जायो वीर
हीराँ जड़ ल्याओ चूनड़ी
ओढ़ूँ तो हीरा, रे वीरा झड़ पड़े
मेलूँ तो तरसे बाई रो जीव
ओढ़ाई धणदेवा चूनड़ी

धर्म रो मायरो

चन्दा र सन्देशो लादे म्हारे माय रो ।
चान्दणीयां में चमक चीर चीर तो ओढासी धर्म रो वीर ।। चन्दा रे
रस्ते बैठो एक विणजारो गाँव बिणजवा आयो, जाणु नहीं परायो
वीरो काई काई लदकर लायो

विश्राम करे पीपल के तले बैरी छाया गैर गम्भीर ।। चन्दा रे ।।
तिस लागी बिणजारो म्हारे फलसे पाणी पिवण आये ।
सासू हुक्म सूं भर लोटा मैं ठंडो पाणी पायो ।
बीरे कि याद क्या करी घात नैनां सूं बह गयो नीर ।। चन्दा रे ।।
बीणजारो सब बिणज भूल गयो रोटी भूल्यो खाणी ।
घूंघट उघाड़ ताई दुःखड़ा सुनादो नहीं थांणे दिलड़े शे जांणु
बीरो बण थांरा दुःखड़ा हरसूँ कैवो तो पहुँचादूं पीर ।। चन्दा रे ।।
हँस हँस काम करूं रे म्हारा बीरा दुःख सहते सुख आई ।
सब कुछ दियो भगवान दियो नहीं मां को जायो भाई ।
मायरे की मन में मांणे कुण तो ओढासी चीर ।। चन्दा रे ।।
सूरज साक्षी में धर्म को भाई फिकर करो क्यों बाइजी ।
मायरे में कांई कांई चाहीजे, जल्दी करो लिखाई जी ।
आंगणीये चढ भरूं मायरो म्हारे दिलड़े में आवे धीर ।। चन्दा रे ।।
थे मति बहाओ नीर ओढो बाई चीर भाई सिर हाथ धरे ।
बिणजारो भाणुड़े रे ब्याह में मामा बण मायरो भरे ।
"शिव" कहे बैरो धन कदीयन घटयो, बढ गयो नदियां नीर

।। चन्दा रे ।।

चाक-पूजन

मायरे से उठकर उन्हीं वस्त्राभूषणों में स्त्रियां कुम्हार के यहां ढोल-ढमाके के साथ 'चाक-पूजन' करने तथा 'बरतन' लाने जाती हैं। कुम्हार के यहां जाकर बरतन की याचना की जाती है । कुम्हार का चाक रोली, चांवल, मोली आदि से पूजा जाता है । चाक पूजन के गीत गाये जाते हैं । चाक पूजन समाप्त करने के बाद कलश और बरतन आदि लिये जाते हैं । बरतनों को आभूषण पहिनाये जाते हैं। पंक्ति सजाकर ढोल और शहनाई के वाद्य संगीत के साथ स्त्रियाँ बरतन लेकर लौटती हैं । आगे

की पंक्ति में वर अथवा वधू की माता होती है। कहीं २ पर कुम्हारिन भी बरतन लेकर आगे चलती है। यह अपने २ रीति-रस्म, पर आधारित रहता है। कुम्हारिन को 'ओढणा' ओढ़ाया जाता है और कुम्हार को 'सिरोपाव' बंधाया जाता है। ये बासन कहीं २ पर मेल के दिन व कहीं २ बड़े दिन लाये जाते हैं।

बरतनों का क्रम इस प्रकार रहता है—

१. पांच कलश बड़े 'बिजोरा सहित। हरी डाल रखकर स्वर्ण की कण्डी से सजाकर।
२. एक छोटा कलश वर अथवा वधू की माता स्वयं लाती है।
३. एक मटकी या कुम्भ सुवासिनी स्त्री लाती है।
४. ये सब कलश गणेशजी के मकान में धान पर रखकर उनके सामने स्थापित किये जाते हैं।
५. जवांई कलश की आरती उतारते हैं। उनको उनका 'नेग' दिया जाता है।

रातिजगा

राति जगा से तात्पर्य रात्रि भर जागरण करके वर की मंगल कामना तथा भावी जीवन की सुख-समृद्धि के हेतु देवी-देवताओं के आवाहन गीत गाये जाने से है। ये गीत इतने अधिक होते हैं कि गाते २ अरुणोदय हो जाता है। वर पक्ष में बरात जाने के पूर्व और कन्या पक्ष में विवाह के एक दिन पूर्व तथा सुहाग रात्रि को भी 'राति जगा' किया जाता है।

राति जगा में देवी देवताओं के गीत गाये जाते हैं जिनमें कुल देवता, सती माता, और पितरों के गीतों की प्रमुखता रहती है। 'रातिजगा' मंगल भावनाओं की आत्मीयता से

ओत प्रोत वर वधू के भावी जीवन की सफलताओं का प्रतीक माना जाता है जिसमें देवी-देवताओं के कर्ममय जीवन की चरित्र गाथाओं के द्वारा लोक जीवन के प्रति पूर्ण निष्ठा, सजग चेतना एवम् सुखकारी भावनाओं का सन्निवेष रहता है। रातिजगा की रात्रि को स्त्रियों द्वारा अनेक प्रकार की अनुष्ठान क्रियायें भी सम्पादित की जाती है। सूर्योदय के पूर्व प्रभात वेला के भावपूर्ण और सरस गीत अपना विशेष महत्व रखते हैं जिन में निद्रा रूपी मोह और अकर्मण्यता का त्याग करने तथा जाग्रत होकर कर्त्तव्य करने की भावमयी उपदेशात्मक उक्तियों की छाया लहराती है।

विधि विधान—

'राति-जगा' की रात्रि को निम्न क्रियायें सम्पन्न की जाती हैं। पश्चात् गीत आरम्भ होते हैं--

१. माया के गेह में बाजोट रखा जाता है जिस पर घी का ७ झारा रेला बहाकर दिया जाता है।
२. वर अथवा वधू के हाथ से पीठी और मेंहदी का हाथ चेपा जाता है।
३. लाल और श्वेत वस्त्र बाजोट पर बिछाया जाता है।
४. लाल वस्त्र पर गेहूँ की ढेरी तथा श्वेत वस्त्र पर चांवल की ढेरी की जाती है।
५. ढेरी पर गुड़, नारियल, पुष्प माला और घी का दीपक रखा जाता है।
६. घी का दीपक अखंड रहता है रात्रि भर उसकी ज्योति रहना आवश्यक है जल का कलश रखा जाता है।
७. सवा रुपया कच्चे दूध में धोकर बधावा का रखा जाता है।

८. गीत आरम्भ हो जाते हैं।

९. देवी देवताओं के गीत जब तक पूर्ण नहीं होते तब तक कोई स्त्री (गाने वाली) बीच में अधूरा गीत छोड़कर नहीं उठ सकती। देवी देवताओं के गीत समाप्त होने पर ही उठ सकती है। ऐसी मान्यता है कि देवो-देवता आकर एक पैर के बल से खड़े हो जाते हैं। यह कहा भी जाता है–"जल्दो जल्दी गीत गावो देवता पगां के पाण खड़ा है।"

१०. प्रथम कुलदेवता का गीत गाया जाता है। फिर अन्य देवो-देवताओं के गीत गाये जाते हैं।

देवो–देवताओं के गीतों के अतिरिक्त मेंहदी, चूंदड़, बीजा, काछवा, बलवा खातन मोरया, खटमलियां आदि गीत गाये जाते हैं। प्रभातकालीन गीतों में 'कूकड़' गीत विशेष प्रसिद्ध है।

११. अन्त में 'पितरां पाटकड़ी' देने के बाद घर को एक स्त्री उठती है और जल का एक कलश उठाकर सर्वत्र जल के छींटे दूर्वा अथवा पान के पत्ते से देकर विसर्जन करती है।

गीत--

रातिजगा में देवी–देवताओं के अतिरिक्त ये गीत भी मुख्य रूप से गाये जाते हैं।

दीपक का गीत—

कुणी जी रे दिवला मेली रे बाट
कुणी जी रे राण्या घी भरे
बाई (बहिन–बेटी का नाम) मेली रे बाट
(गृहस्वामी का नाम) री राण्या घी भरे
बलजे रे दिवला आखी जी रात
आज म्हारा पुरजारो राती जागो।

देवी देवताओं के गीत

दवी-देवताओं के गीत जीवन के हर मांगलिक कार्य के शुभ अवसर पर गाये जाते हैं। विशेषकर विवाह के सम्पूर्ण कार्य लग्नपत्रिका के समय छोटा तथा बड़ा बान के अवसर पर गाये जाते हैं। 'राति जगा' में देवी-देवताओं के गीतों का महत्वपूर्ण स्थान है। ये गीत जीवन में मंगल भावनाओं के प्रतीक स्वरूप हैं और चिरायु और सुखी और सम्पन्न होने के लिये देवताओं का आवाहन किया जाता है जिससे सब कार्य निर्विघ्न समाप्त हो जाय।

विनायक—

चालो विनायक आपाँ जोशी रे चालां ।
चोखाँ सा लगन लिखासां हे म्हारा विड़द विनायक ।
चालो विनायक आपां बजाज रे चालां ।
चोखा सा सालूड़ा मोलावस्यां हे म्हारा............
चालो विनायक आपां सोनी रे चालां..............
चोखा सा गहना घड़ास्यां हे म्हारा.............
चालो विनायक आपां पंसारी रे चालाँ
चोखा सा मेवा मोलावा हो म्हारा.............

आगे क्रमशः गांधी कदोई, तमोली, पनिया आदि नाम लेकर गीत को पूरा करना चाहिये।

पितरां रा गीत--

सोना री डांडी राजा रूपा रा वेला ।
तोल गांधी रा वेटा किस्तूर जी ।
पूछत पूछत नगर ढंढोल्या ।
घर वताओ बनड़ा रा बाप रो जी ।
एक ऊंची सी मेड़ी राजा लाल किवाड़ी

कैल झवरके वाँके बारने जी ।
छोटी सी तलाई राजा पानीडो बोतेरो
पितरां रो लश्कर बो घणो जी ।
पितर भी न्हाया राजा बालूड़ा न्हाया
तोई तलाई में पानी अंत घणो जी ।
छोटो सो बुगचो राजा कपड़ा बोतेरो
पितरां रो लश्कर बो घणो जी ।
पितरां भी पहरया राजा बालूड़ा भी पहरया
तोई डाबूल्या में गहणा अंत घणा जी ।
छोटो सो चौपड़ो राजा कूंकूं बोतेरो
पितराँ रो लश्कर बो घणो जी ।
पितर भी चरच्या राजा बालूड़ा भी चरच्या
तोइ चोपड़ा में कूं-कूं अन्त घणो जी ।
छोटी सी कढ़ाई राजा लापसड़ी बोतेरी
पितरां रो लश्कर बो घणो जी
पितर भी जीम्या राजा बालूड़ा भी जीम्या
तोई कढ़ाई में लापसी घणी जी ।

सोना री झारी राजा गंगाजल पाणी
पितरां रो लश्कर राजा बो घणो जी
पितर भी पीया राजा बालूड़ा भी पिया
तोई झारी में गंगाजल बो घणो जी
पितर बालूड़ा राजा न दो आसीस
थांकी आसीस सूं फलस्यां फूलस्यां जी
नीम जूं थे फलजो राजा बेल जूं पसरज्यो
लीलड़ा नारेलां लड़ लूमजो जी ।

पितरां पाटकड़ी

छोटी सी तलाई म्हारी सैंया नीर बोतेरो म्हारा सैंया ।
देवता को लश्कर कहिजे अन्त घणो ।
न्हाया तो धोया पितर हमारे सन्तोक्या म्हारा सैंया ।
तलाई में दूणी-दूणी सिग चढ़े ।
छोटो सो बुगचो जीमें कपड़ा बोतेरा म्हारा सैंया
देवता को लश्कर कहिजे अन्त घणो ।
पहर्‌या तो ओढ्या पितर हुयाजी सन्तोक्या म्हारा सैंया
बुगचा में दूणी दूणी सिग चढ़ैजी
छोटी सी कढ़ाई लापसड़ी बोतेरी म्हारा सैंया ।
कढ़ाई में दूनी दूनी सिग चढ़े ।
छोटो सो चोपड़ो म्हारा सैंया जीमें रोली बोतेरी ।
म्हारा सैंया चोपड़ा में दूणी दूणी सिग चढ़े ।
छोटी सी नगरी जीमें साजनियां बोतेरो म्हारा सैंया ।
जगदीशजी की बेटी पोता अन्त घणो ।

सती माता

सती माता खेले जी आंगणे
घर सूरज जी रे आंगणा ।

हाथां सोवे दांती रो चूड़लो
मुखां सोवे पाना रो बिड़लो ।

लिलवट सोवे हिंगलू री टींकी
नैना सोवे काजल री रेखा ।

हाथाँ देस्या दांतां रो चुड़लो
मुखां देस्यां पानां रो बिड़लो ।

लिलवट देस्यां हिंगलू री टींकी
नैना देस्यां काजल री रेखा ।

दियाड़ी माता

माता ऊबा सूरज जी बींदवै
माता ऊबा चंदा जी बींदवै ।
माता झांझर के झंकार
दियाड़ी माता ने अघड़ घड़ावस्यां
माता अघड़ घड़ाय पाट पुआवस्या
माता राखूंली हियड़ा माय
माता ऊबी सासू—बूहां बींदवै ।
माता ऊबी देवरान्यां—जिठान्यां बींदवै
माता गोद झडूल्यो पूत ।
माता अघड़ घड़ाय पाट पुआवस्या
माता राखूंली हियड़ा मांय ।

बीजासण माता

माता हरिया जंवारा लेती ऊतरी
तुर्रा टांको जी सुसराजी रा जोध
आज बीजासण ऊतरी

माता कुंभ-कलश लेती ऊतरी ।
झोल्या झेलोजी सासू बुआं रो साथ
आज बीजासण ऊतरी ।
आगे घरवालों के नाम जोड़कर गाया जाता है ।

श्री रघुनाथजी

मोर मुकुट श्री छत्र बिराजै तुर्रा री छिब न्यारी जी
तुर्रा री छिब न्यारी लाल थांकी महिमा भारी जी ।
मंदिर चालोजी रघुनाथ धणी रा दरसन करस्यांजी ।

मंदिर चालोजी ।

काना में थांके कुंडल सोवे, मोत्यां की छिब न्यारीजी
मोत्यां की छिब न्यारी लाल थांकी महिमा भारीजी
मंदिर चालो जी ॥

गला में थांके डोरा सोवे कंठ्या की छिब न्यारी जी
कंठ्या की छिब न्यारी जी लाल थांकी महिमा भारी जी
मंदिर चालो जी ।

जामो तो केसरियां सोवै, दुपट्टा की छिब न्यारी जी
दुपट्टा की छिब न्यारी लाल थांकी महिमा भारी जी ॥
मंदिर चालो जी ।

हाथां में थांके चटिया, सौवे, बींट्यां की छिब न्यारी जी
बींट्यां की छिब न्यारी लाल थांकी महिमा भारी जी ।
मंदिर चालो जी ।

पगल्यां में थांके झांझर सौवे, पावड्यां की छिब न्यारी जी
पावड्यां री छिब न्यारी लाल थांकी महिमा भारी जी ।
मंदिर चालो जी ।

बालाजी (१)

सुसराजी थे छो म्हारा बाप
हुकम करो तो बालाजी रे चालस्यां जी
क्यांकी बहू बोली छै जात,
कांई रे कारण बालाजी रे चालस्यांजी ।
चूड़ला री बोली छै जात
पूतड़ला के कारण बालाजी रे चालस्यां जी
जेठ बड़ेरा थें छो म्हारा बाप
हुक्म करो तो बालाजी रे चालस्यां जी
देवर राजा थे छो म्हारा वीर
हुक्म करो तो बालाजी रे चालस्यां जी
भावज कांई की बोली छै जात,

काईं रे कारण बालाजी रे चालस्यां जी ।
चुड़ला री बोली छै जात
पूतड़ला रे कारण बालाजी रे चालस्यां जी ।
सायब राजा माथा रा सिरदारजी
हुक्म करो तो बालाजी रे चालस्यां जी ।
काईं की बोली छे जात.

काईं रे कारण बालाजी रे चालस्यांजी ।
चूड़ला री बोली छे, जात
पूतड़ला कारण बालाजी रे चालस्या जी ।
बजड़ किवाड पन्ना मारु साँकल जुडी
दिवडो उगे छे बालाजी रे देश में जी
खोलो बालाजी रे बजड़ किवाड़
सांकल खोली बींज्या पीर
खोल्यां बालासा बजड़ किवाड़
सांकल खोली बींज्या सा की जी
दीनी पन्ना मारुं गेठजोड़ा री जात
रोकड़ रुपयो बालाजी रे भेंट को जी
छोड्या पन्ना मारुं लीलड़ा नारेल
झरता तो छोड्या बाला सा रे चूरमा जी
टूटया बाला सा मूजा रे पसार
एक गोदयां दूजो धरम की आंगली जी
थें छो बाला सा अञ्जनी रा पूत
कारज सारया राजा राम का जी ।

(२)

बालाजी का रथ पर रतन सिंहासन
जगमग ज्योत जै बाला की
जय–जय बोलो बजरंग बाला की

वाला की नन्दलाला की, दशरथ नन्द दुलारा की ॥

अष्ट पहर दोय पोलयां बिराजे बाला
मौज उड़े छै मोहन माला की
शनिश्चर वार दूध का न्हावन वाला
ऊपर धम्म नगारा की ।
मंगलवार जरी का चोल बाला
ऊपर झड़प दुशाला की ।
जल शीशम बाला आप विराजो
पत राखो कंठी माला की
सरजू की तीर अयोध्या नगरी रामा
चौकी वजरंग बाला की ।

भेरूजी—

भैरूजी रा आमा–साँमा ओवरा बालूड़ा
कोई देवजी रे सूरज सामी पोलींजी हिंडोला-मचोलो जी
कंवर केसरयां कालूड़ा
कोई भैरूजी रे आया सिमरथ पावन बालूड़ा
कोई देवरजी रे हुई मनवार जी
हिंडोला मचोलो कंवर केसरयां कालूड़ा
कोई भैरूजी रे दूध चढ़ै जी ओ बेठे बालूड़ा ।
कोई देवजी रे राँदी गुजली खीर जी
हिंडोलो मचोलो कंवरजी केसरयां कालूड़ा ।
कोई भैरूजी रे राण्या पहरयो चूड़लो बालूड़ा ।
कोई दैवजी रे जायो लाडण पूत जी
हिंडोलो मचोलो कंवर केसरया कालूड़ा ।

तेजाजी—

कुल में तो दोय फुलड़ा बड़ा जी
एक सूरज दूजो चाँद

ऊबा सगला ग्रो तेजाजी थें बड़ा जी
सूरज री किरगा तपे जी
चंदा री निरमल रात
कुल में तो दोय फुलड़ा बडा जी
एक धरती दूजो ग्रसमान
ऊबा सगला ग्रो तेजाजी थे बड़ा जी
वा बरसे वा नीपजे जां।
दुनियां में तो दोय फुलड़ा बड़ा जी
एक घोड़ी दूजी गाय।
ऊबा सगला ग्रो तेजाजी थे बड़ा जी
गऊरा जाया हले खड़े जी
घोड़ी रा ढाबेला राज
कुल में तो दोय फुलड़ा बड़ा जी
एक मायड़-दूजो बाप
ऊबा सगला ग्रो तेजाजी थे बड़ा जी
माता रे ग्रोदर ग्रोपन्या जी
बाप लड़ाया छै लाड़
कुल में तो दोय फुलड़ा बड़ा जी
एक साहब दूजो वीर
ऊबा सगला ग्रो तेजाजी थे बड़ा जी
वीर ग्रोढ़ावे बाला चूनरी जी
साईं रो उबछल राज
जो थांकी सेवा करे जी
जाने इंद पूत............ऊबा सगला.......
जो थांकी नीदरा करै जी
जाने पटक पछाड़–ऊबा सगला........

गोगाजी

गोगा आजो जी पांवणा
कोई बरण भादूड़ा री रात
गोगा री मेड़्या चांदणां
ऊंचा घालूंली वेसना
कोई दूध पखारूं पांवजी
गोगा की मेड़्या चांदणों
चावल राँदूली ऊजला
कोई हरया मूंगा री दालजी
गोगा री मेड़्याँ चांदणों
भैंस दुवाँऊली भूरड़ी
कोई राँदू गुदली खीर जी
गोगा री मेड़्या चाँदणो
घी बरताँऊली तोलड़्यो
कोई तिवण तीस-बतीस जी
गोगा री मेड़्या चादणों
बीजापुर करोजी बीजणों
कोई चतुर उतारो बाजोट जी
गोगा री मेड़्या चाँदणों
थाल परोसली पदमणी
कोई झांझर रे झंकार जी
गोगारी मेड़्या चाँदणों
गोगा–गोगीजी जीमसी
कोई ले ले विचला गास जी
कोई अमरित चलूं कराय जी
गोगा री मेड़्या चाँदणों।

पीरजी--

पांचो पीराँ करचो रे मलीदो तो लाल गरुजी अगवाणी रे मीयाँ।
घेरवे गुमानी घेरवे गुमानी बाबो मस्त दिवानी तो सुणजो
म्हारा लाल गुरु की वाणी बे मीयां घेरवे गुमानी।
चार चड़स बाबो पानी का मंगावे
तो दोय भरीया दोय रीता बे मींयां घेरवे गुमानी ।।
चार भरोंटो बाबो घास की मगावे
तो दोय आला दोय सूखा वे मींया घेरवे गुमानी ।।
सासू आंगण बहू थे पलंग पर तो
देवर पीसणा पीसे ये मीयां घेरवे गुमानी।
आगे सगा थे सगा के जाते हुक्का की मनवारी
रे मींयां घेरवे गुमानी।
अब तो सगा थे सगा के जावे तो बाड़ी की मनमानी
रे मींयां घेखे गुमानी।
घेरवे गुमानी बाबो मस्त दीवानी तो सुणजो म्हारा
गुरु की बाणी वे मींयां घेरवे गुमानी ।।

झूंझारजी

झूंझार राणा कठ्ठे तो बाजा बाजिया
झूंझार राणा कठ्ठे लिया छै मलाण
ओ झूंझार राणा बांय पकड़ घुड़ला चढ़ो।
झूंझार राणा जामो तो सोवे केसर्यां
झूंझार राणा दुपट्टो तो लाल गुलाल
ओ झूंझार राणा बांय पकड़ घुड़ला चढ़ो ।।
झूंझार राणा ब्यावर बाजा बाजिया
झूंझार राणा अजमेर किया है पलाण
ओ झूंझार राणा बाँय पकड़ घुड़लो चढ़ो ।।

ओ झूंझार राजा चांवल राँदूली ऊजला
झूंझार राजा हरिया मूंग की छै दाल।
ओ झूंझार राणा बांय पकड़ घुड़लो चढ़ो ।।
झूंझार राणा भैंस दुआऊंली भूरड़ी
झूंझार राणा रादूंली गुदली खीर
ओ झूंझार राणा बांय पकड़ घुड़ला चढ़ो ।।
झूंझार राणा पोला पोऊं नोगरी
झूंझार राणा तिवण तीस बत्तीस
ओ झूंझार राणा बांय पकड घुडला चढो ।।
झूंझार राणा घी बरताऊं तोलड़यो
झूंझार राणा पापड़ तलूंली पचास
ओ झूंझार राणा बांय पकड घुडला चढ़ो ।।

लोडी-बडी

थे म्हारे आजो ये म्हारी जीजी बाई पावणा ।
वरण भादूडा री रात
आज तो लोडी रे जी बडी जी आया पावणा ।
ऊंचा तो घालू ये म्हारी जीजी बाई बेसना ।
लुल लुल लगूंली पांव
आज तो लोडी रे जीं वडी जी आया पांवणा ।
चांवल तों रादूं ये म्हारी जीजी बाई ऊजला ।
हरिया मूंग री छै दाल
आज तो लोडी रे जी वड़ी जी आया पांवणा ।

रामदेवजी—

कठऽतो बाजत बाजिया अजमल जी का बाबा
कठऽतो गुड्या छै निशान

कठऽ तो गुड्या छै निशान रुणिजा थांका ओ कुंवरजी
शहर में बाजा बाजिया अजमल जी का चावा
देवरा में गुड्या छे निशान–रुणिजा शहर थांको ओ कुंवरजा
थांको ज थांका बाप को अजमल जी का चावा
पडै अै न्यारा री ठौर–रुणिजा....
कलंक आवे बांझडी अजमल रा चावा
कलक वालूडा री मांय–रुणिजा....
आवै बांझडी अजमलजी रा चावा।
नौलख वालूडा री मांय रुणिजा....
कांई मागे वांझडी अजमल जी रा चावा
कांई बालूडा री मांय–रुणिजा....
वेटा तो मांगे बांझड़ी अजमल जी रा चावा।
अन–धन बालूडा री मांय–रुणिजा....
वेटा तो देस्यां बांझडी–अजमलजी रा चावा
छत्र चढावे बांझडा–अजमल जी रा चावा
धजा अे वालूडा री मांय–रुणिजा....

पाबूजी

सिलावट रा वेटा तू ही म्हारो भाई रे
महल चुनावत चार जुग हुआ रे
पाबूजी परगीज बागां में डेरा दिया रे।
हलवाई रा बेटा तू ही म्हारो भाई रे
सीरणी बनावत चार जुग हुआ है। पाबूजी....
सोनीडा रा वेटा तूं ही म्हारो भाई रे
गहणो घडावत चार जुग हुवा रे पाबूजी....
वजाजी रा वेटा तूं ही म्हारो भाई रे
कपडा मुलावत चार जुग हुआ रे।

खातीडा रा बेटा तू ही म्हारो भाई रे
ढोलणी घडावत चार जुग हुआ रे ।
पाबूजी परणीज........

सूरजजी का गीत

धोला धोला काईं करो अे धोला वन में कपास
धोलो सूरजजी रो घोडलो अे, धोला बहू रैणादे रा दाँत
उगतो उजास भरणो आथम तो सिन्दूर–वरणो
गऊ अे चरण चाली पंछीडा मारग चाल्या
नेम धरम सब साथ
सहेल्यां बाबल घर बाज्या ढोल
सहेल्यां सुसरेजी घर आंणद–उछाव
रातो–रातो काईं करो अे राती चुडले रो मजीठ
रातो सूरजजी रो घोडलो अे राता बहू रैणादे रा नैण
उगता उजास–भरणो आथम तो सिन्दूर-वरणो
गऊ अे चरण चाली पंछीडा मारग चाल्या
नेम धरम सब साथ
सहेल्या बाबल घर बाज्या ढोल
सहेल्या सुसरेजी घर आंणद उछाव
कालो-कालो काईं करो अे काला तो वनरा काग
कालो सूरजजी रो घोडलो काला बहू रैणादे रा केस
उगतो उजास भरणो आथम तो सिन्दूर–वरणो
गऊ अे चरण चाली पंछीडा मारग चाल्या
नेम धरम सब साथ
सहेल्यां बाबल घर बाज्या ढोल
सहेल्यां सुसरेजी घर आणं उछाव
पीलो-पीलो काई करो अे पीली चीणा के री दाल

पीलो सूरजजी रो घोडलो अे, पीलो बहू रैणादे रो चीर
उगतो उजास भरणो आथम तो सिन्दूर–बरणो
गऊ अे चरण चाली पंछीडा मारग चाल्या
नेम धरम सब साथ
सहेल्यां बाबल घर बाज्या ढोल
सहेल्यां सुसरेजी घर आणंद उछाह
हरियो-हरियो काईं करो अे, हरी अे बन में तो दूब
हरियो सूरज जी रो घोडलो अे, हरि बहू रैणादे री कूंख
उगतो उजास भरणो आथम तो सिंदूर–बरणो
गऊ अे चरण चाली पंछीड़ा मारग चाल्या
नेम धरम सब साथ
सहेल्यां बाबल घर बाज्या ढोल
सहेल्यां सुसरेजी घर आणंद उछाव

मेंहदी—

मेंहदी बायी बायी बालूडा री रेत
प्रेम रस मेंहदी राचणीं
मेंहदी सींची-सींची जल जमना रे नीर
प्रेम रस मेंहदी राचणी
मेंहदी उगी-उगी पात-दो पान
प्रेम रस मेंहदी राचणीं
मेंहदी उभी सोहे गुल क्यारी रे बीच
प्रेम रस मेंहदी राचणीं
मेंहदी चूंटी-चूंटी नाजुकड़ी सी नार
प्रेम रस मेंहदी राचणीं
मेंहदी सूखे-सूखे आंगणियां रे बीच
प्रेम रस मेंहदी राचणीं

मेंहदी पीसी पीसी चाकली रे पाट
प्रेम रस मेंहदी राचणीं
मेंहदी छाणी-छाणी सालूड़ा री कोर
प्रेम रस मेंहदी राचणी
मेंहदी भीजै-भीजै रतन कचोले बीच
प्रेम रस मेंहदी राचणीं
मेंहदी मांडी–मांडी लाडी ग्रे जेठानी बैठ
प्रेम रस मेंहदी राचणीं
मेंहदी निरखे म्हारी नणदल बाई रो वीर
प्रेम रस मेंहदी राचणीं
कुण मांड्या छे सुवागण थारा हाथ
प्रेम रस मेंहदी राचणी
राच्या-राच्या छे सुन्दर थारा हाथ
प्रेम रस मेंहदी राचणीं
थारो हाथ म्हारे हिवड़े ऊपर राख
प्रेम रस मेंहदी राचणीं
थारी मेंहदी पर वारूं पन्ना ये ज्वार
प्रेम रस मेंहदी राचणीं।

नीमड़ली

उदियापुर से बीज मंगावो मारूजी
नीमड़ला बुवाद्यो पाल तलाब की जी म्हाका राज।
माखणियां की पाल बंधा द्यो मारूजी
नीमड़ला सींचा द्यो काचा दूध से जी म्हां कां राज।
ऊगी नीमड़ली घहर-घमेर मारूजी
फैली सौला कोस में जी म्हां का राज।
ग्रब के ग्रोलंगाणे मारूजी सुसरा जी ने भेज

अबके चोमासा रंग महल में जी म्हां का राज।
सुसरेजी रा जोधा–जोधा पूत
वे क्यों जावे गढ़ की चाकरी जी म्हांका राज।
अब के ओलगाणे मारुजी जेठजी ने भेज
अबके चौमासे पनामारु घर रहो जी म्हांका राज।
जेठजी के तारा दूती नार
निठ उठ थांस लड़ पड़े जी म्हांका राज।
अबके ओलगाणे पनामारु देवर जी ने भेज
अबके चौमासे प्यारा अठे ही रहो जी म्हांका राज।
देवरिया के गोने आई नार
वा डरपै महलां में बैठी अकेली जी म्हाँका राज।
अबके ओलेगाणे पनामारू नणदोईजी ने भेज।
अबको चौमासो फूला सेज पे जी म्हांका राज।
नणदोईजी की नारी नादान
वा डरपै महलां में बैठी अकेली जी म्हांका राज।
अबके ओलेगाणे पनामारू पाडोस्यां ने भेज
अब के चौमास्यो हरियल बाग में जी म्हाँका राज।
पाड़ोसियाँ की आमी सामी पोल
नित उठ थाँसे कलै करे जी म्हांका राज।
अितरा में पना मारू थे ही गंवार
नित उठ घुड़ला थे कसो जी म्हांका राज।
अितरा में मरवण म्हे ही अे सपूत
नित उठ रण में म्हे ही चढ़ां जी म्हाका राज।

बत्तीसी नूतना

विवाह के अवसर पर वर की माता अपने पीहर 'बत्तीसी' या भात नूतने जाती है जिसका तात्पर्य विवाह का आमन्त्रण

पत्र पितृपक्ष वालों को देना है और उसमें पूर्ण सहयोग की कामना प्राप्त करना होता है।

१. थाल में गुड़ को भली और नारियल रेशमी वस्त्र से ढक कर ले जाती है।
२. थाल भाई की गोद में रख दिया जाता है।
३. छोटे भाई भतीजों को नारियल दे दिया जाता है तथा उनके तिलक लगाया जाता है।

इस अवसर पर बीरा का गीत विशेष रूप से गाया जाता है जिसमें भ्रातृ-स्नेह छलका पड़ता है। जीवन में भाई बहन के पवित्र संबंध के परिचायक ये वीरा गीत होते हैं।

मायरा—

मायरा वर पक्ष में बारात विदा होने के पूर्व ननिहाल वालों की ओर से पहनाया जाता है, वधू पक्ष में फेरे-भाँवर के पूर्व। राजस्थान में एक कहावत है कि विवाह का आधा व्यय मायरेती पर निर्भर होता है। यदि मायरे वालों का पक्ष सम्पन्न हो तो ऐसा सम्भव है। मायरेती खुले हृदय से सब कार्य करते हैं। मायरेती भी धूम-धाम से साज-सामान सजा कर आते हैं। वर पक्ष वाले गाजे बाजे के साथ उनकी अगवानी करते हैं। गीतों की धूमधाम मच जाती है—

१. नानेरा-दादेरा आटाल्या वाटाल्या देते हैं।
२. बाजोट पर बिठला कर तिलक करके भेंट दी जाती है।
३. छोटों को टीका करके रुपया हाथ में दिया जाता है।
४. भ्राता बहिन को वेश-लंहगा, चुनरी, ब्लाउज आदि पहिराता है।
५. इस क्रम से वर वधू के सम्बन्धियों को मायरा पहिनाया जाता है।

६. मायरे के उपरान्त वर की मां कलश लेकर आती है तथा भाई को कलश बंधाती है। भाई कलश में रुपया डालता है। फिर भाई की आरती की जाती है। भाई बहन परस्पर गले मिलते हैं। मिलने के पश्चात् यह क्रम समाप्त होता है।

यहीं पर सब मायरे वालों को 'शरबत' पिला कर अभ्यर्थना की जाती है। उस समय ये गीत गाये जाते हैं। **मायरे के गीत सरस और भावपूर्ण होते हैं जिनमें भ्रातृ प्रेम की सुन्दर अभिव्यक्ति लक्षित होती है।**

वीरो थारो आयो ऐ
म्हारी चन्द्र गोरजा, करो आरती ऐ वीरो थारो आयो ऐ।
आज तो वीरासा म्हारा कांकड़ आय विराजा जी
कांकड़ करवा झुकाया ऐ।। वीरो० ।।
आज तो वीरासा म्हारा बागां आय विराजा जी
माली फुलडा टांक्या रे।। वीरो० ।।
कांकड़ करवा झुकाया ऐ वीरो थारो आयो.........
आज तो वीरासा म्हारा पिनघट आय विराजा जी
पिनहार्‌यां कलस बंधाओ ऐ :
झनपट झनपट तास्या बाज्या सूतो शहर जगायो ऐ........
बरसो म्हारा काला बादल बरसो सवाया जी
बरसो म्हारा सुसराजी रा जाया सवाया जी

(इसगीत में परिवार के सदस्यों का नाम ले लेकर गीत को बढ़ाया जाता है।

रोड़ी पूजन—

रातिजगा के दूसरे दिन प्रातः काल रोड़ी पूजन की विधि सम्पन्न की जाती है। यह लौकिक प्रथा स्त्रियों द्वारा ही सम्पादित कराई जाती है। वर को सवेरे 'चन्दोवे' (सुहागिन

स्त्री का ओढ़ना) की छाया में घर के बाहर कूड़ा कचरे को रोड़ी पूजने के लिये ले जाते हैं।

१. नायन (खवासन) के हाथ में पूजन का थाल होता है।
२. वर के हाथ में लोहे का ताकला (चर्खे का) दे देते है।
३. 'ताकला' रोड़ी पर थोपकर उसकी पूजा की जाती है।
४. पूजन में कुंकुम, चावल, लच्छा (मोली) सुपारी और पुष्प रखे जाते हैं।

पूजन समाप्त कर लौटने के बाद 'नायन' आती और वह रोड़ी में से 'ताकला' निकालकर ले जाती है। ताकले के साथ रोड़ी का कुछ अंश भी वह ले आती है। कहा जाता है कि इस ताकले और रोड़ी के 'अंश' को 'न्यात' या 'जिमनवार' के दिन 'कोठार' में रख दिया जाता है जिससे किसी प्रकार की न्यूनता नहीं रहती और सब कार्य ऋद्धि-सिद्धि सहित सम्पूर्ण हो जाते हैं।

वस्तुतः रोड़ी पूजन से यही भाव लगाया जाता है कि जिस प्रकार रोड़ी धूप-वर्षा आदि सहन करती है उसी प्रकार वर-वधू को भी सहनशील होना चाहिये तथा जिस प्रकार रोड़ी में सब प्रकार का कूड़ा-कर्कट एक साथ एक स्थान पर बिना भेद-भाव के पड़ा रहता है उसी प्रकार वर वधू को भी कुटुम्ब और पारिवारिक सदस्यों के मध्य संगठन और प्रेमपूर्वक रहना चाहिये।

निकासी—

वर के विवाह के हेतु प्रयाण करने को 'निकासी' कहा जाता है। वर को तणी के नीचे नियत स्थान पर बाजोट पर बिठाया जाता है। इस अवसर पर तेल उतारते हैं। बड़े बान के दिन तेल चढ़ता है और निकासी के दिन उतारा जाता है। 'पोठी' और 'बना' ढोल और शहनाई के स्वरों के साथ सारे

वातावरण को गुजंरित कर देते हैं । तेल उतारने के बाद पीठी से उबटन किया जाता है। पीठी के पश्चात् एक कुंवारी कन्या 'कोरा कुंभ' लेकर आती है। कुंभ में दही होता है और कन्या के हाथ में 'बेलनी'। वह 'बेलनी' के द्वारा दही को घुमाकर वर के मस्तक पर डाल देती है । यह 'अटाल घोले' की प्रथा कहलाती है। फिर नाई (खवास) वर को स्नान कराता है। फिर सवासने को बुलाया जाता है वह वर को 'अबोट' नये वस्त्र धारण करने में सहायता देती है। इसका 'सवासने' को नेग मिलता है। वस्त्र पहनने के बाद वर के सिर पर 'मोड़' 'तुर्रा' कलंगी आदि बांधे जाते हैं। गले में सोने, मोती और हीरों के कंठों से वर को सजाकर 'बींद-राजा' बनाया जाता है। इस वर की वेश-भूषा और बनाव-शृंगार राजा की शोभा के अनुसार ही होता है।

वस्त्र पहिनने के पश्चात् ' लगदण ' झिलाया जाता है 'लगदण' ६ वस्तुओं का बना होता है—

१. गुड़ को पिण्डनुमा बनाया जाता है।
२. गुड़ में धनिया मूंग सुपारी, पैसा रखकर मौली से बांधकर हरे दोने में रख कर दिया जाता है।
३. वर के हाथ में स्त्रियां देती है और फिर पुनः वर स्त्रियों के हाथ में लोटा देता है।
४. लगदण स्त्री पुरुष दोनों झिला सकते हैं।

लगदण के गीत गाये जाते हैं। लगदण झिलाने के बाद वर बाजोट के नीचे रखे हुये कोरे दीपक पर जो ओंधा रखा होता है, जिसके नीचे पैसा रखा जाता है चरण धर कर बड़ दीये को बड़ा करता है। फिर मामा उसे गोद में लेकर बाजोट पर से उतार कर माया के गेट तक पहुँचाता है। वहां विनायक के पूजने के बाद वह विनायक को विवाह कार्य निर्विघ्न

समाप्त होने की प्रार्थना करता है पूजन के पश्चात् गणपति को वर शीश नवाता है। फिर वर का मुंह ऊंठा कराते हैं। वर केसरिया चावल खाकर बाहर आता है जहां पर आभूषणों से सुसज्जित घोड़ी प्रस्तुत रहती है। इस अवसर पर 'घोड़ी' के सुन्दर भावपूर्ण गीत गाये जाते हैं।

बींद के सम्मुख उसकी माता आती है। माता के हाथ में पूजन का थाल होता है। पहले वह घोड़ी की पूजा करती है। घोड़ी के अक्षत और कुंकुम का तिलक लगाती है। घोड़ी के खुरों पर मेंहदी कुंकुम की टींकी लगाकर फिर उसे 'पीला' (ओढ़ना) ओढ़ाती है। घोड़ी पूजन के पश्चात् वर के मस्तक पर तिलक लगाती है। तत्पश्चात्

(१) चांदी की हाँसली (गले में पहरने का आभूषण) लेकर बींद राजा के हृदय स्थान पर लगाती है। फिर ७ बार नेता (दही बिलोने का) ७ बार नथ, ७ बार अपने आँचल (ओढ़न के पल्ले) से इसी प्रकारकी क्रिया करती है। और आँचल में चने की दाल लेकर घोड़ी को खिलाती है।

(२) भावज द्वारा बींद के नेत्रों में काजल लगाया जाता है। काजल लगाने का उसे 'नेग' प्राप्त होता है। इस अवसर पर चंचल चपल भाभी विनोद करना नहीं भूलती है। वह एक ही नेत्र में काजल डालकर रुक जाती है फिर बींद के खुशामद करने व मनोवांछित 'नेग' प्राप्त कर लेने पर दूसरे नेत्र में लगाती है।

(३) माता पल्ले से 'लुवाछना' लेती है।

(४) माता बींद को स्तन पान कराती है जिसका यह भाव रहता है कि अपने माँ के 'दूध की लाज' रखना है। वर माँ को स्वीकृति सूचक प्रणाम करता है। माता वर को आशीर्वाद देती है और उसे हाथ-खर्ची स्वरूप कुछ रुपये भी देती है। तदन्तर

अन्य उपस्थित गण वर को रुपया नारियल खर्ची के रूप में भेंट करते हैं।

(५) माता घोड़ी तथा बींद पर 'वारना' करके नाई, कुम्हार, ढोली, साईस को वारन (न्योछावर) दे देती है। फिर अन्य कुटुम्ब की स्त्रियाँ भी करती है।

(६) घोड़ी पर बींद के पीछे छोटी कुमारी (बहिन) कन्या बैठाई जाती है जो सगुन के लिये बींद पर 'राई लून' वारती जाती है।

पश्चात् घोड़ी मन्दिर की ओर प्रस्थान करती है। घोड़ी के आगे ढोल शहनाई आदि वाद्य यन्त्र तथा घर के कौटिम्बक लोग रहते हैं। घोड़ी के पीछे घर-परिवार की स्त्रियाँ रहती हैं। भूआ या बहिन पीछे से रक्षा के लिये काकंडा फेंकती है। एक के सिर पर मंगल कलश रहता है। इस प्रकार सब भगवान के मंदिर में पहुँचते हैं। बींद घोड़ी पर से उतर कर मन्दिर में जाकर भगवान के चरणों में शीश नवाता है। नारियल और रुपया देवता के भेंट स्वरूप चढ़ाता है। मन्दिर के पुजारी उसके गले में केसरिया दुपट्टा और बताशे का दौना प्रसाद स्वरूप देता है। बींद लौटकर अन्य स्थान पर पहुँचता है। स्त्रियाँ बधावा गाती हुई घर को लौट जाती हैं। इस प्रकार निकासी का कार्य सम्पन्न होता है और फिर शुभ मुहुर्त पर बरात बिदा होती है। बराती बन ठन कर सज सँवरकर बरात के साथ प्रस्थान कर देते हैं। बरातियों की सख्या पूर्व ही निश्चित कर ली जाती है। इनका निमन्त्रण स्वरूप 'पीले चावल' और सुपारी देकर उनसे 'चौकड़ी' करवाली जाती है। इस प्रकार बींदराजा की बरात सगे सम्बन्धियों और इष्ट मित्रों का रंगीला गिरोह लेकर प्रस्थान करती है।

बधावे के गीत—

बरात प्रस्थान करने के पश्चात स्त्रियाँ 'बधावा' गीत गाना प्रारम्भ करती हैं। बरात बिदा होने के पश्चात 'बना' गाना बन्द कर दिया जाता है। और 'सेवरा' 'बधावा' आदि के गीत गाये जाते हैं। उसी दिन 'चूड़ा' का दस्तूर कर लिया जाता है। आनन्द उल्लास में स्त्रियाँ बरात लौटने और वधू आने की प्रतीक्षा करती हैं। 'बधावा'-किसी की वृद्धि हेतु मंगल-कामनायें करना कि उसका वंश बढ़े, धन-धान्य बढ़े आदि।

मंगलकामनायें आन्तरिक उल्लास और अपनत्व की भावनाओं से परिपूर्ण होकर बधावरा की दिशा लेती है। पुत्र-जन्म, विवाह-संस्कार एवं अन्य शुभ अवसरों पर होने वाले उत्सव व नृत्य-गीत के अवसरों पर जो भाव व्यक्त किये जाते हैं उन्हें बधावा कहा जाता है।

राजस्थानी लोक-गीतों में "बधावा" एक विशेष अर्थ को ध्वनित करता है। बधावा राजस्थानी लोकगीतों का एक विशेष प्रकार है जो अपने अन्तर में मांगलिक त्यौहारों, पर्वों के भाव के अतिरिक्त विवाह संस्कार के अवसर पर विशेष और किसी के आगमन या बिदाई पर गाए जाते हैं जिनमें पात्र विशेष के प्रति मंगलकामनाएं होती हैं।

बधावा गीत—

घुड़ला री बाज रही खुड़ताल
हंसत्यारा बाजे सैंया म्हारी टोकरा
जाने म्हैं तो लाख बधाई द्यां।
कोई तो बधाओ अे म्हाको बनाजी ने आवता।
उठो बहूरान्या करो सोलह सिनगार
केसरिया अे राण्या बुलावे रंग महल में

बाइ बहना भर मोतीड़ा थाल
करो न निछावर बाई थांका वीर की जी

(२)

म्हारे ऊंची मेडी चत्तर साल
जवर जवर दिवलो जलै ।
म्हारे पोलीड़ा पोल उघाड़
म्हें तो बाहर से भीतर आवस्यांजी
म्हैं तो जास्याँ भंवरजी के महल
म्हैं तो देखां भंवरजी की साहिबी जी ।
म्हारां जवाई जनमली धी
करो ऐ भरोसो मारी कूंख रो
म्हारे बाजत आवली बरात जी
दरसन आवैं रूड़ा राजवी
म्हारे घर रीतो आगंन रीतो
रीतो जी म्हारो सो परिवार
धी जवांई लेगिया जी ।

फिर आगे इस प्रकार--

म्हारे जानाये जनमेलो पूत
करो अे भरोसो म्हारी कूंख को
बाजत चढ़ैली बरात जी
म्हारै घर भरियो आगंन भरियो
म्हारो हरख्यो छै सौ परिवार
जी म्हारें पूत परण घर आवसी ।

(३)

पांच बधावा म्हारे आविया मारूजी,
लीना छै आँचल मोर, घरण रा ख्याली लाल,

ढालो जी जाजम पर चौपड़ खेल्स्यां मारूजी।
पहलो बधाओ मारा बाप को मारूजी
दूजो म्हारो सुसराजी री पोल
अगन्यो बधावो मारा वीर को मारूजी
चौथो म्हारो जेठ–बड़ा री पोल
पाँचवों बधावो चाँदरा चौक रा मारूजी
बूठेलो देवर जेठ.................धरा रा........
छठो बधावो म्हारी कूंख रो मारूजी
जाया छे लाडरा पूत.................धरा........
सातवों बधावो म्हारा रंग महलां रो मारूजी
साहिब पोढ़या सुख सेज........धरा........
आठवों बधावो म्हारा नित नवां मारुजी
मेल्यो म्हारा सुसराजी री पोल-धरा........

(४)

मोती रा लूमक झूमका
किस्तूरी ओ राजा बांदरवाल।
बधावो जी म्हारी आवियो
बाधूं मरुदेवी रे ए ओवरे
बांकी राण्या जाया छे पूत। बधावो........
जाया रा हरख बधावरा
परण्या की ओ राजा रात जगाय। बधावो........
चार रंगाओ चोखी चूंदड़ी
परदेशन ओ बाई सुभद्रा ओढ़ाय।
चार मंगाओ चोखा चूड़ला
परदेशन ओ बाई बहिन पहराय। बधावो........

(५)

पहले बधावे ग्रे सखिया मोरी म्है गया राज ।
गया म्हांरा बाबो जी री पोल
बाबोजी संतोख्या ए सखिया मारी अपरणे राज ।
म्हाने दीनो छे दखनी चीर
चढ़ती बायी ने ए सूरण भला होया राज ।
लाड जवाई ने सूरण भला होया राज
दूजे बधावे ऐ सैंया म्हारा म्हे गया राज ।
गया म्हारा वीरोजी री पोल
वीरोजी संतोख्या सैंया मोरी आपरणे राज ।
म्हाने दीनो छै चुनरी रो बेस
चढ़ती बाई ने ऐ सूरण भला होया राज ।
लाड जवाई ने सूरण भला होया राज
अगरणे बधावे ऐ सखियां म्है गया राज ।
गया म्हारा सुसराजी री पोल
सुसरोजी संतोख्या ए सैंया मोरी आपरणे राज ।
म्हाने लाया छै दोय रथ जोड़
चढ़ती बायी ने सूरण भला होया राज ।
लाड जवाई ने सूरण भला होया राज
चौथे बधावे ऐ सैंया मोरी म्हैं गया राज ।
गया म्हारा जेठ बड़ा री पोल
जेठ जी संतोख्या ऐ सैंया म्हारो अपरणे राज ।
म्हाने दीनो छै आधो धन बांट
चढ़ती बाई ने ए सूरण भला होया जी राज ।
लाड जवाई ने ऐ सूरण भला होया जी राज ।
पांचवे बधावे ए सैंया म्हारी म्है गया राज ।
गया म्हारा मारुजी री पोल

मारुजी संतोख्या ऐ सैंया मोरी अपणे राज ।
म्हाने दीनो छै सुख सुहाग
चढ़ती बाई ने ऐ सूण भला होया राज
लाड जवाई ने सूण भला होया राज ।

ढूंढिया या खोड़िया—

बरात के प्रस्थान के पीछे वर के घर पर जो नाटक स्त्रियों द्वारा रचा जाता है वह दृश्य भी हमारे वर्तमान विवाह संस्कार का आवश्यक अग बन गया है। इसमें केवल हास्य विनोद और नकल की भावनाओं की छाप मात्र है। स्त्रियों का मन कैसे लगे उन्हें भी तो कुछ कार्य चाहिये । वे भी बरात बनाती हैं। वर-वधू बनती हैं। सम्पूर्ण विवाह की रस्में पूर्ण की जाती हैं। विशेषकर यह रीति उन्हीं जातियो में प्रचलित है जिनके बरात के साथ स्त्रियाँ नहीं जातीं अथवा जो अपढ़ और मूर्ख स्त्रियों का समाज होता है। धीरे-धीरे यह प्रथा शहरों में कम होती जा रही है और इसका स्थान यज्ञ, हवन आदि शुभ अनुष्ठानों ने ले लिया है।

विवाह की मंगलमयी घड़ियां

विवाह का पहला दिन—

विवाह के सम्पूर्ण रस्में-रिवाज आदि कन्यापक्ष के घर पर ही सम्पन्न होते हैं। विवाह की तैयारियां कन्यापक्ष के यहां बड़ी धूमधाम से होती रहती हैं। बारात का अच्छा आदर सत्कार किया जाता है। सुन्दर व सुरक्षित स्थान में बारात को ठहराया जाता है वह जनवासा कहलाता है। जहां बरातियों की सुविधा और आमोद-प्रमोद के सब साधन सुलभ कर दिये जाते हैं जहां बराती महानुभाव आराम उल्लास और सुखपूर्वक विवाह की रंगरेलियों में मस्त होकर भंग बूटी

छानने और पराया माल तोड़ने में अनुरक्त रहते हैं। बारातियों के चार दिन भी उल्लास और मस्ती से भरपूर रहते हैं। वहाँ उनको खाने को तरो-ताजा माल और सुनने को गालियाँ, (मधुर संगीत) शयन को आराम के सब साधन सुलभ होते हैं।

थाम स्थापन—

बरात के आगमन के पश्चात बधू के घर के शेष मांगलिक कार्य विधिपूर्वक सम्पन्न किये जाते हैं। पुरोहित को बुलाकर थाम स्थापित किया जाता है। थाम विवाह मंडप के एक कोने में स्थापित किया जाता है। थाम के गीत गाये जाते हैं—

> "डाबां मायला गहना क्यूंनी हारया म्हारा पिवजी
> म्हारी राजकुंवर क्यूं हारया जी।"

पूजन में कन्या के माता पिता भी बैठते हैं। थाम स्थापन के पश्चात मायरा, बासन लाना आदि कार्य सम्पन्न होते हैं। ये सब कार्य दिन में कर लिये जाते हैं। स्त्रियां और पुरुष सब उपवास करते हैं और विवाह के बाद कन्या का मुख देखकर भोजन करते हैं।

लग्न मंडप—

कन्या के घर पर ही विवाह संस्कार किया जाता है। विवाह का घर भली प्रकार से सजाकर माङ्गलिक चिह्नों से सुशोभित किया जाता है। शुभ मुहूर्त में वधू के शरीर को उबटन आदि से मार्जित करके सुन्दर वस्त्राभूषणों से अलंकृत किया जाता है। सभी पूज्य गुरुजन तथा संब्रन्धी कन्या को आशीर्वाद देते हैं। विवाह के दिन कन्या की माता हरिताल और मनःशिला से मस्तक पर विवाह दीक्षा का तिलक लगा देती है तथा कन्या से पतिव्रता स्त्रियों का पदाभिवन्दन और कुल देवता को प्रणाम

करवाती हैं सभी स्त्रियां उसको अखंड सौभाग्य और प्रेम के लिये आशीर्वचन कहती हैं।

अगवानी या सामेला—

वर दुकूल, अंगराग और शिरोभूषण तथा मस्तक पर हरिताल के तिलक से सजाया जाता है। वर वधू के घर को ऐश्वर्यपूर्वक सगे सम्बन्धी तथा इष्ट मित्रों के साथ बारात सजाकर प्रयाण करता है। कोई सेवक मार्ग में वर के सिर पर छत्र धारण करता है दूसरा चामर ढलता है और बाजे गाजों के साथ बारात रवाना होती है। इस प्रकार वर के साथ उसके पुरोहित बन्धु बांधव मांगलिक संगीत के साथ वधू के घर जाते हैं। मंगल गान और वाद्य से दिशाएं व्याप्त हो जाती हैं। कन्या का पिता बन्धु बान्धवों के साथ वर की: अगवानी करता है। अगवानी या सामेला में कन्या का पिता वर की पूजा अर्घ्य आदि से करता है। उस समय मांगलिक मंत्रोच्चार के बीच वर प्रसन्नतापूर्वक उन्हें ग्रहण करता है।

मिलनी—

वर पक्ष की ओर से कन्या को आभूषण और पहिनने के लिये नवीन वस्त्र दिये जाते हैं। वैश्य-समाज में विवाह के कुछ समय पूर्व ही मिलनी का दस्तूर कर दिया जाता है। मिलनी का अर्थ है 'मिलना'। वर तथा कन्या पक्ष के परिवार वाले परस्पर गले मिलते हैं। मिलते समय कन्यापक्ष की ओर से उन्हें कुछ राशि भेंट स्वरूप प्रदान की जाती है। साथ ही वधू के वस्त्र व आभूषण भी तोरण मारने से कछ घंटों पूर्व ही गाजों बाजों के साथ वधू के घर भेज दिये जाते हैं।

वैवाहिक वस्त्राभूषण—

विवाह के अवसर पर वर पक्ष की ओर से कन्या को स्वर्ण और चांदी के आभूषण प्रदान किये जाते हैं तथा पहिनने के लिये नवीन वस्त्र भी। आभूषण इस प्रकार के होते हैं--

स्वर्ण के आभूषण--

बाजूबन्द, अणवटा, पगमान, बिछिया, नथ, टिकड़िया, कड़ाबन्द, चोटीबन्द, कंकण, बींदी, नरवालिया, नोगरी, तिमणियो, वेणी, कबाण, चोब, डगडुगी, नौसर हार, चन्द्रहार, हथफूल, शीशफूल, फोलरी, कंदोरा आदि।

चाँदी के आभूषण—

रकाबी, बाजोट, पीकदान, गुलाबदानी, चकलौट, बेलन घड़ा, हीबी, मोमबत्ती, बिछिया, जोड़ आदि।

कन्या के वस्त्र—

पडला, पँवरी, मामा झोल्या, लहंगा या घाघरा कांचुली आदि

वर के वस्त्र—

केसरिया पाग, पोतियो, खीनवाव, वोलावन्द जरीरो इलायचो, गोस पेच आदि।

समय की परिवर्तनशीलता के कारण, वस्त्रभूषण में विशेष परिवर्तन हो गया है। प्राचीन समय में राजस्थान में इसी प्रकार के वस्त्राभूषणों की साज सज्जा रहती थीं।

तोरण पर--

अगवानी की धूमधाम समाप्त होने पर वर को तोरण पर ले जाया जाता है। तोरण अथवा बाहर के द्वार का प्राचीन सभ्यता से ही तोरण पूजन का विचार शास्त्रों में मिलता है।

तोरण काष्ठ का बना होता है जो कन्या के घर में प्रवेश द्वार पर लटका हुआ रहता है। वर घोड़े पर चढ कर शहनाई के मांगलिक स्वरों के साथ तोरण के निकट पहुंचता है। तोरण को नीम की डाली या तलवार से छूकर ही विवाह की वेदी पर पहुँचना होता है। तोरण पर वर की सास आरती करती है और वही रस्म सास पूर्ण करती है जैसी वर की मां निकासी के अवसर पर करती है। नेत्र में काजल लगाते समय चतुर सास वर की परीक्षा के लिये उसका नाक भी खींच लेती है। साथ ही गाती है—

सासू निरखै जवांई ऐ
पछै देसी ओलम्बा ऐ
म्हारो सरस जवांई ऐ
म्हारो हीरा रो व्यापारी
म्हारो हीरा रो व्यापारी

स्त्रियां बींद राजा और बारातियों को मधुर गीत प्रेम भरे रसीले गीत सुनाकर उनका स्वागत करती है। इस अवसर पर चुन २ कर बरातियों को गीत सुनाए जाते हैं--

सात सुपारी लाड़ा सिंगाड़ा रो सटको
इस्या कांई जानी आया धेड़ माया पटको।

इसमें बरातियों की काना, कुबड़ा, बूढ़ा, बालक आदि विशेषण लगाकर आवभगत की जाती है। वे उनका विनोद करती हुई कहती हैं—

काला काला ही आया गोरा एक नहीं आया
तबला बजाओ रे भैया मंगल गाओ रे भैया।

बरातियों और चतुर स्त्रियों में प्रश्नोत्तर भी होते हैं। इस प्रकार वर लग्न मंडप में पहुंचता है और वधू की प्रतीक्षा करता है।

तोरण गीत--

तोरण द्वार पर वर के आने पर स्त्रियां अपनी मधुर स्वर लहरी से सम्पूर्ण वातावरण को गुंजरित कर देती हैं। उस समय विशेष रूप से 'कामण' गाये जाते हैं। साथ ही वर की सुन्दरता, शोभा व प्रशंसा के गीत गाये जाते हैं--

कांकड़ पर राईबर आयो अे बनी जोड़ी बता दे अे
ग्वाल्या बींद सरायो थारो राइवर आयो अे।
बागां में राइवर आयो अे बनी थारी.... . ...
माली को बींद सरायो अे।
पणिहारियां बींद सरायो अे।
तोरण पर राइवर आयो अे। बनी...............
खाती को बींद सरायो ऐ।
मायां पर राइवर आयो ऐ ....
भुआ बाई बींद सरायो ऐ।
जोशी को बींद सरायो ऐ।
बनी थारी जोड़ो बता दे ऐ।..... ....

कामण गीत--

कांकड़ आया राईवर थरहर कण्यां राज
बूझां सिरदार बनी ने कामण कून करया छै राज।
म्हें नहीं जाणा म्हारा गवालां कामणगारा राज
ग्वाला को नेग चुकास्या कामण ढीली छोड़ो राज।
छोड्या न छूटे राईवर करड़ा घुल्या छै राज।

कांकड़ के स्थान पर बांगा, शहर, तोरण, फेरा, थामे, महल आदि लगाकर गीत को पूरा किया जाता है। अन्य 'कामण' 'बनी' के साथ देखिये।

वर की परख--

वर की योग्यता और वाक-चातुर्य की परक्षा लेने सालियां और वधू की अन्य सहेलियां वर के निकट पहुंचती है और वर से हास्य विनोद आदि चलते हैं। जब तक कन्या, विवाह वेदी के लिये स्नानादि द्वारा निवृत्त नहीं होती। इस समय फिर कन्या के तेल उतरता और पीठी का उबटन होता है। वर के भी पीठी का दस्तूर कन्या पक्ष की स्त्रियों द्वारा पूर्ण किया जाता है। नियत समय और शुभ मुहूर्त पर वर-वधू को माया में लेजाकर पूजन आदि सम्पन्न करवा कर लग्न मंडप पर लाया जाता है।

विवाह वेदिका--

विवाह-क्रिया के लिये एक मनोरम वेदिका बनाई जाती है। वेदी चारों ओर रखे हुये सुगन्धित पुष्प, मिट्टी के घड़े धूप, अर्घ्य से भरे हुये पायों तथा रंग बिरंगे वस्त्रों से अलंकृत की जाती है। वेदिका के तीन ओर देवता के आसन प्रतिष्ठित किये जाते हैं, ब्रह्मा, नवग्रह, मात्रिका. कलश आदि। इनकी पूजा आचार्य पुरोहित करवाते हैं। फिर वेदिका पर अग्नि प्रज्वलित की जाती है और उसमें घृत से हवन किया जाता है फिर कन्या का पिता हाथ में पंचभूत जल लेकर वर को इस प्रकार सम्बोधन कर कहता है "यह मेरी कन्या है, तुम्हारी धर्म सहचरी है इसका पाणिग्रहण करो। यह पतिव्रता और यशस्विन है और छाया की भांति तुम्हारा अनुसरण करेगी।"

यह कहकर वह जल डाल देता है। वर और वधू प्रज्वलित अग्नि की तीन बार प्रदक्षिणा करते हैं और अन्त में उसमें खील तथा खेजड़ी वृक्ष के पत्ते छोड़ देते हैं। इसके पश्चात् पुरोहित वधू से कहता है 'हे वत्से! यही अग्नि देव तुम्हारे विवाह के साक्षी हैं। तुम्हें अपने पति के साथ गृहस्थाश्रम के धार्मिक कृत्यों को पूर्ण करना है। इस समय वर वधू से ध्रुव तारा देखने के लिये कहता है और वे दोनों ध्रुव तारा देखकर कहते हैं--"मैंने ध्रुव तारा देख लिया।' इस तारे के दर्शन से वैवाहिक सम्बन्ध को स्थिरता की प्रतिष्ठा हो जाती है क्योंकि यह तारा आकाश में स्थिर रहता है। फिर वधू वर के वाम भाग का स्थान ग्रहण करती है। इसी समय पंडित गोत्राचार का वाचन करते हैं। इस पर उपस्थित महिला मंडली पंडित की विद्वत्ता पर व्यंग करती हुई कहती है--

भलो पढ़यो रे पांड्या भलो पढयो
जजमाना री गोत पढयो।

तत्पश्चात् 'हस्तमेल' छोड़ दिया जाता है। अन्त में सब वर-वधू को प्रणाम करते हैं। वे वधू को अखंड सौभाग्यवती तथा वीरप्रसवा होने का अशीर्वाद देते हैं। विवाह के पश्चात् वधू-बान्धव और स्त्रियां आदि अक्षत से वर-वधू को बधायें देती हैं। विवाह हो जाने पर कन्या और वर के पिता यथा शक्ति अनेक प्रकार के दान देते हैं। लग्न मंडप से उठते समय 'मेंडा' बरसाया जाता है। कहीं २ पर विशेष कर वैश्यों के एक वर्ग में वधू को फेरे के बाद चुनरी ओढ़ायी जाती है। इस अवसर पर चुनरी गीत गाया जाता है।

माया के गेह में—

विवाह की वेदिका से उठकर वर वधू माया के गेह में शीश नवाने जाते हैं वहां पर स्त्रियां वर से अनेक प्रकार के प्रश्न पूछती हैं और वर से हास्य विनोद प्रारम्भ कर देती हैं। वर चतुर हुआ तो बड़ी चतुराई से उनका प्रत्युत्तार दे देता है अन्यथा स्त्रियां उसकी पूरी खैर खबर वाग्जाल से ले लेती है।

गोद भरना—

कहीं २ पर वर अपनी वधूको लेकर जनवासे को जाता है। वहां पर वधू की गोद भरी जाती है और कहीं २ पर मार्ग में स्त्रियां विदा गीत गाती हैं जिसमें कोयलड़ी प्रसिद्ध है। पर कन्या के घर पर ही गोद भरने की रस्में वर के जीजा अथवा पिता के द्वारा पूरी की जाती है। इस प्रकार विवाह का प्रथम दिन धूमधाम और आनन्द वैभव से परिपूर्ण रहता है। दो जीवन एक सूत्र में आबद्ध हो जाते हैं। कितना मार्मिक है जीवन का यह पक्ष! एक नारी शैशव की समस्त किलकारियों को, जीवन की स्वच्छन्दता व उन्मुक्तता को छोड़कर सदैव के लिये एक अनजान अपरिचित व्यक्ति के साथ सबको रोता बिलखता छोड़कर नई डगर पर चल देती है। जहां मिलता है उसे अपने सपनों का राजा जिसके प्रेमपूर्ण आलिंगन में उसके जीवन की समस्त अभिलाषाएँ साकार हो उठती हैं। जिन्दगी की घड़ियों में मादकता का संचार होने लगता है। पारस्परिक आकर्षण-विकर्षण का यह रूप जीवन की सफलता का सूचक बन जाता है। सच है कि विवाह के द्वारा नारी-पुरुष अपने आत्मीय अभाव की पूर्ति करती हैं। प्रेम और पवित्रता का यह अनुपम रूप है।

विवाह का दूसरा दिन—

विवाह का दूसरा दिन वर वधू के लिये होता है। प्रातः काल वर को कंवर कलेवे के लिये वधू के घर मांडे में आमन्त्रित किया जाता है।

१. कंवर कलेवे में मीठे चावल बनाये जाते हैं।

२. आसन पर वर को बैठाया जाता है।

३. वर के सम्मुख बाजोट पर थाल में चावल सजाये जाते हैं।

४. वर के साले आकर वर को रुपये के साथ मुंह में ग्रास देते हैं।

५. कंवर कलेवे के बाद वर वधू का गठबन्धन करके देवी देवताओं को पुजाया जाता है। कन्यापक्ष और वर पक्ष के कुल देवता तथा भैंरूजी बालाजी आदि देवताओं की पूजा बाहर जाकर की जाती है।

१. पांच छै पत्थर के ढेले एकत्र किये जाते हैं।

२. उन पर सिन्दूर पन्ना लगा कर पूजा की जाती है।

३. धूप खेकर नारियल बघारते हैं।

इस प्रकार मध्याह्न तक देवी देवताओं का पूजन पूर्ण हो जाता है। फिर जुआ खेलने की प्रथा आरम्भ होती है।

१. एक बड़े बरतन में जल और दूध भर दिया जाता है।

२. वर-वधू के सामने रख दिया जाता है।

३. कन्या पक्ष की चतुर स्त्री उसमें अंगूठी पैसा आदि डालती है।

४. वर-वधू अँगूठी को जीतना चाहते हैं। जिसके हाथ में अँगूठी आ जाती है वही विजयी होता है। यह क्रम सात बार चलता है।

५. कंकण डोरडे वर-वध परस्पर खोलते हैं और बांधते हैं।

६. सुवासिनी द्वारा रुई के चूखे दोनों की जंघा पर रख दिये जाते हैं और दोनों को एक दूसरे अंग का स्पर्श करते हुए बैठा देते हैं।

इस प्रकार जुआ-जुई की लौकिक क्रिया समाप्त होती है आजकल शिक्षित वर्ग इससे दूर होता जा रहा है। पर हमारे गांवों में अब भी यह प्रथा विशेष चाव से अपना पार्ट अदा करती है।

भात न्यूतना--

मध्याह्न के बाद तीसरे पहर कन्यापक्ष की ओर से स्त्री पुरुष जनवासे जाते हैं और रात्रि को भात जीमण (बढ़ार) के लिये उनको आमन्त्रित करते हैं। इस अवसर पर पुरुष वर्ग में वाग्युद्ध होता है। दोनों वर्ग एक दूसरे की प्रशंसा में श्लोक कविता आदि बोलते हैं। इत्र गुलाल छिड़के जाते हैं। पान सुपारी इलायची से कन्या वालों का स्वागत सत्कार वर पक्ष की ओर से होता है। स्त्रियां अपने कोमल सुरीले कंठ से गीतों की बौछार करती हैं। इस समय जलो नामक विशेष गीत गाया जाता है।

जलो गीत

जला जी मारु म्हें तो थारा डेरा निरखण आई हो
मृगनयनी रा जलाल
म्हें तो थांरा डेरा निरखण आयी हो जलाल
जलाजी मारुजी देखां थारा डेरा री चतराई हो
म्हारा जोड़ी का जलाल
म्हें तो थारा डेरा निरखण आई हो जलाल
जलाजी मारु रात्यूं धण री पेट लडो मल दुख्यो हो
मृगनयनी रा जलाल
थे तो धण री खबर न लीवो हो जलाल
जलाजी मारु रात्यूं धण की आखड़ली ज फरूकी हो
म्हारी जोड़ी का जलाल
आखडली फरूकी जलो घर आयो हो जलाल
जलाजी मारु राजा मायलो राज भलो राठोड़ी हो
मृगनयनी रा जलाल
शहरा माहलो शहर भलो बीकाणो है जलाल
जलारी मारु पुरुसा मायलो पुरुस भलो राठोड़ो हो
मृगनयनी रा जलाल
राण्यां मांयली राणी भली भटियाणी हो जलाल
जलाजी मारु छोटा मांयला छौट भली मुलतानी हो
मृगनयनी रा जलाल।
छीटां माहली छींट भली मुलतानी हो जलाल
जलाजी मारु रुपिया महिलो रुपियो भलो गंगासाहि हो
म्हारी जोड़ी का जलाल
रुपिया मायलो रुपियो भलो गंगासाहि हो जलाल
जलाजी मारु मैं तो थारा डेरा निरखण आई हो

मृगनयनी रा जलाल
मैं तो प्यारा डेरा निरखण आई हो जलाल

जवांई गीत

(१)

सुसरो जी बुलावे जी जवांई सासु बुलावे जी
थारा छोटा साला कर रह्या थारो चाव
एक बार आवो जी जवांई जी म्हारे घर पावणां
ऊंटा चढ़ आवो जवांई जी घुड़ला चढ़ आवोजी
आवो आवो बगिया में बैठ
लाड जवांई जी एक बार आओ म्हारे घर पावणां
भायां ने लावो साथीड़ा ने साथ
लाड जवांई जी एक बार आओ म्हारे घर पावणां
घुड़ला ने देस्या जवांई जी दाणो उड़द रो जी
थारे करला ने कारड घलाय
एक बार आज्यो जवांई जी म्हारे घर पांवणा
साथीड़ा ने देस्या जी लूंग सुपारी जी
कोई थाने तो नागर पान
लाड जवांई जी एक बार आवो म्हारे पांवणा
चावल रांधां जवांई जी उजला उजला जी
हरिया मूंगा की तो दाल
रुच रुच जीमो जवांई जी म्हारे घरे पांवणां
साथीड़ा पोढ़े जवांई जी बाग बगीचा में
बालकिया जवांई महला माय
एक बार आवो जवांई जी म्हारे घरे पांवणां
साथीड़ा ने घलास्या जवांईजी पलंग निवार को
कोई जवांई जी ने हिगलू ढोलियो
लाड जवांई जी एक बार आवो म्हारे घर पांवणां

(२)

जी बाला इण सरवरिया री पाल,
जवांई धोवे धोवत्याजी मांका राज
जुगबाला धोवे धोवत्याजी मांका राज
जीश्रो बाला हाथ धोय कर्या ये बनाव,
कुणीसा रा प्यारा पावणां जी मांका राज
वीरसिंह सा का प्यारा पावणा जी मांका राज
जीश्रो बाला कीजो वाका सुसरासा ने जाय,
सामा तो सांढ़यां भेजजो जी मांका राज
जीश्रो बाला कीजो वांका साला जीने जाय,
हथाया जाजम ढालजो जी मांका राज
जीश्रो कीजो वाका सासुजी ने जाय,
उजला सा भात पसारजो जी मांका राज
जीश्रो बाला कीजो वाका साला जी ने जाय,
बहिनोई मेला जीम जो जी मांका राज
जीश्रो बाला कीजो वाका सालीजी ने जाय,
गालियां खूब गवावजो जी मांका राज
जीश्रो बाला कीजो वाका सुसराजी ने जाय,
नौ खंडा मेहल चुनावजो जी मांका राज
जीश्रो बाला ऊंचा नीचा मेहल चुनाय,
चारों ही दिशा बारणाजी मांका राज
जीश्रो बाला कीजो वारी दासी ने जाय,
महलां में दीवलो जोवजो जी मांका राज
जीश्रो बाला कीजो वारी दासी ने जाय.
महलां में सेज बिछवाजोजी मांका राज
जीश्रो बाला कीजो वारी दासी ने जाय,

महलां में चोपड़ ढालजोजी मांका राज
जीश्रो बाला कीजो वांकी सहेल्या ने जाय,
मारुणी मेहलां मोकलोजी मांका राज
जीश्रो बाला खेल्या २ चारोली सी रात,
कुण हार्‌या कुण जीतियाजी मांका राज
हार्‌या हार्‌या सजना रा जोध,
राया रा बाईसा जीतियाजी मांका राज
जीश्रो बाला श्राई २ जवांयाँ ने रीस,
बाया पर बायो चामकोजी मांका राज
जीश्रो बाला श्राई २ बाइसा ने रीस,
मेहला सू हेटा उतर्‌याजी मांका राज
जीश्रो बाला खोल्या छै सोलह सिंगार,
श्रोढ़ा पीला फागण्या जी मांका राज
जीश्रो गौरी श्रबके तो पाछे श्राव,
चाकर थाका बाप का जी मांका राज
जीश्रो बाला चाकर रियो य न जाय,
हाकम भाला जी वांका जी मांका राज
जीश्रो बाला मैं छा प्रियतम की धीय,
रुस्या तो पाछा न मना जी मांका राज

(३)

थांका डोराजी जवांई सा माकी कंठ्याँ जी,
श्रापा दोनू बेच र तेल मंगावा बड़ा करांलाजी ।
बड़ा करांलाजी क सीरो पूडी करांलाजी
दो दिन काढ़लो कड़ाका तड़के बड़ा करांलाजी ।

इसी भांति गहनों के नाम लिये जाते हैं ।

(४)

राज आप तो कठा का सुखवासी, कठ आयर उतर्‌या सा नन्दोई सा ।
राज आप तो अजमेर रा सुखवासी, विजयनगर डेरा दीदासा नन्दोई सा ।
राज म्हारे आंगणिये फिर जाओ, आया कर मातू सा नन्दोई सा ।
राज म्हारा भाणां ने ठुकराओ, जीम्या कर मातू सा नन्दोई सा ।
राज म्हारा कंवरा ने बतलाओ. राख्या कर मातू सा नन्दोई सा ।
राज आप तो साला रे बहनोई, भोजन मेला जीमोजी नन्दोई सा ।
राज मैं हरता ने फरता देखूं, मोही प्यारा लावोजी जबांई सा ।
राज मांकी बाई ने बतलावो, मोहे प्यारा लागोजी नन्दोई सा ।

(५)

जैस्या पेचा राजन बांधे वस्या ननदोई,
राजन के भोले भूल गई मैं नहीं जाण्या ननदोई ।
बाई सा गुनो माफ करो मैं नहीं जाण्या ननदोई ।
बाई सा गुनो माफ करो मैं अब जाण्या ननदोई ।

इसी तरह अन्य वस्तुओं के नाम लेकर गीत आगे बढ़ाया जाता है ।

(६)

रतन कुआ क गेल होसा ननदोई,
मैं रखड़ी भूल र आई हो सा ननदोई ।
लादी हो तो दीजो हो सा ननदोई,
बाई सा न जाय मत कीजो हो सा ननदोई ।
बाई सा र घूत्यारा हो सा ननदोई,
मायड़ ने जाय सिखावे हो सा ननदोई ।
थांका मांका सासु हो सा ननदोई,

गलियारे राड़ करावे हो सा ननदोई ।
थांका मांका सासु होसा ननदोई,
पंचा में न्याव चुकावे हो सा ननदोई ।

भात बढ़ार--

बढ़ार की रात को नाना प्रकार के मिष्ठान्न बनाकर बरातियों तथा अपने समाज के व्यक्तियों को आमन्त्रित किया जाता है। बढ़ार जीमने का दृश्य भी बड़ा लुभावना होता है । पंक्तियों में बराती सजधज आसनों पर बैठ जाते हैं मध्य में बोंद राजा बैठ जाते हैं। मिठाइयां आदि विभिन्न प्रकार की भोजन सामग्री लाकर परोसी जाती है। जीमने के पूर्व देवी देवता की पत्तल निकाली जाती है। भात कन्यापक्ष की ओर से दिया जाता है। वर पक्ष का चतुर व्यक्ति भात छुड़ाता है। भात छूटने पर उनको भोजन जीमने की आज्ञा मिलती है। वर को इस प्रकार इस अवसर पर जो वह उचित मांग करे कन्या का पिता प्रदान करता है। इधर बराती जीमना प्रारम्भ करते हैं। उधर स्त्रियां सामूहिक रूप से डटकर गीत गाल्यां बरातियों और वर के पिता तथा अन्य सम्बन्धियों के नाम लेकर गाना आरम्भ करती हैं। बरातियों की जी भरकर मनवार की जाती है।

भात का बांधना

बांधू बाबल बीज दखेरे
बांधू मायड़ गीगो जायो
बांधू दाई नालो मोड़यो
बांधू नायल नावरा नवायो

बांधू जोशी नावरण पूजायो
बांधू भूत्र्रा मंगल गायो
बांधू मारग रस्ते ल्यायो
बांधू पातल टीप टीपाली
बांधू दूना पत्ता वाला
बांधू लाड्ड नुक्ती वाला
बांधू जलेबी घेरा वाली
बांधू सीरो मांडल बस्यो
बांधू लपसी झरझर करती
बांधू खाजा खर खर करता
बांधू पापड़ पड़ पड करता
बांधू सांगरी ग्रौर केर
बांधू जानेत्या री बैर
बांधू रायतो ग्रौर राई
बांध बींद की भौजाई

भात को वर पक्ष की ग्रोर से छुड़ाया जाता है। पश्चात वर तथा बराती 'जीमना' प्रारम्भ कर देते हैं। दूसरी ग्रोर से कन्यापक्ष की स्त्रियां बरातियों के मनोरंजनार्थ गींत गाल्यां गाती हैं। इन गीतों में व्यंग ग्रौर मनोविनोद की सुषमा ग्रतिरंजित है।

गीत गाल्यां

(१)

धोया धोया थाल परोस दिया भात जी।
ग्राग्रो सीतारामजी बैठो म्हाके साथ जी।
बैठो म्हाके साथजी. बताग्रो थांकी जांत जी।

बाप म्हाका राजा जी, माँय पटरानीजी
चारू ँ भाई चौधरी, बहन सुजान जी
भुआ म्हाकी सोदरा रसोई क मायजी ।
आओ आओ गनपतलालजी थासूं घालूं हाथजी
था सं घालूं हाथ, बताओ थांकी जात जी !
बाप म्हाको ढ़ेढ़–डूम, मांय छीनाल जी
चारू ँ भाई चोरटा, बहन उदाल जी
भुआ म्हाकी भगतन रसोई क माय जी

ये गीत गाली भीं इसी प्रकार प्रश्नोत्तर रूप में आगे चलते हैं ।

(२)

म्हारा माथा में मैंमद ल्याय कटोरो पीले ओ दूध को ।
म्हारे रखड़ी कोनी अे घार नार कटोरो लेजा दूध को ।।
म्हारे किल्फा घनी जी भरतार कटोरो पीले ओ दूध को !
तूँ तो कठां स ल्याई भूरी भैंस कटो रो लेजा दूध को ।!
म्हारा पिअर स ल्याई भूरी भैंस कटोरा पीले ओ दूध को ।
ओ तो काचो है गोय घर नाम कटोरो लेजा दूध को ।।
मैं तो तातो कर ल्याई भरतार कटोरो पीले ओ दूध को ।
इमैं माखी पड़ गई घर नार कटोरो लेजा दूध को ।
मैं तो छानकर ल्याई भरतार कटोरो पीले ओ दूध को ।।
ओ तो फीको है गोय घर नार कटोरो लेजा दूध को ।
मैं तो खांड गेर लाई जी भरतार कटोरो पीले ओ दूध को ।।
म्हारा माथो दुख यै थर नार कटोरो लेजा दूध को ।
थां को माथो दाबूँ जी भरतार कटोरो पीले ओ दूध को ।
म्हारो पेट दुख यै घर नार कटोरो लेजा दूध को
थाने डाक्टर बुलाऊँ भरतार कटोरो पीले ओ दूध को ।।

म्हारा पग दुख यै घर नार कटोरो लेजा दूध को
थाने कुण जी भरमाय भरतार कटोरो पीले ओ दूध को ।।
म्हाने ब्याईजी वाली भरमाया घर वार कटोरो लेजा दूध को
थाने घनश्याम जी वाली परणाऊँ भरतार कटोरो पीले ओ दूध को
वा तो चोखी कोनी ये घर नार कटोरो लेजा दूध को ।
आपां दोनी पीवां ये घर नार कटोरो पी लेवां दूध को ।।

(३)

ब्याई जी वालो हो नखराली
तक तक नयना मारो तीर
यारा संग उतराई तस्वीर ।
बजाजी रो बेटो धण रो असल बायलो
साडी पहराय उतराई तस्वीर
तक तक नयना मारो तीर ।
हलवाई रो बेटो धण रो असल बायलो
घेवर खुवाय र उतराई तस्वीर
तक तक नयना मारो तीर ।

यह इसी प्रकार, दर्जी, कपड़ेवाले, बिसायती, चूड़ीवाला आदि के नाम के साथ आगे बढ़ाया जाता है ।

(४)

इक पतीयां जी, छोटी पियां जी
लिख रही पीतम प्यारी
वा नार ब्याई जी वाली ।
इक दवात जी, दवात कलम मंगवाई
जिम के सरबरती स्याही, वा नार ब्याई जी वाली ।
छोटी ननदल जी, चढ चौबारा आई

थे कांई करो भोजाई
वा नार ब्याई जी वाली ।
वीरां थांका जी, पति म्हारा जी,
बसै शहर बम्बई, वांकी खबर नई आई
भाभी म्हारी ओ मन में धीरज धारो
थाने वीर मिलावां म्हारो ।
वा नार व्याई जी वाली ।।
वीरा म्हाकोजी आमर में उग आई हिरनी
थाने याद करे जी थाकी परनी ।
वीरा म्हाराजी आमर में उग आया तारा ।
अब घर आओ वीरा म्हारा ।।

(५)

आज तो ब्याई जी बाली न ले जावां ला ?
रंग भाँड जावां ला, जाता तो करता हेलो पाड जावां ला ।
पूनम तो म्हारे राखी, पूनम पडवा न लेजावां ला ।
पडवा तो म्हारे पड़तो बार, दूज न ले जाबां ला ।
दूज तो म्हारे भाई दूज,
तीज ने लेजावां ला ।
तीज तो म्हारे आखा तीज,
चौथ न ले जावां ला ।
चौथ तो म्हारे करवा चौथ,
पांचम ने जावां ला ।
पांचम तो म्हारे बसन्त पांचे,
छठ न ले जावां ला ।
छठ तो म्हारे ऊब छठ,
सातम न ले जावां ला ।

सांते तो म्हारे सील सातम,
आठम ने ले जावां ला।
आठम तो म्हारे जनम आठ,
नोमी न ले जावां ला।
नोमी तो म्हारे गोगा नवमी,
दसम न ले जावां ला।
दसम तो म्हारे तेजा दसम
ग्यारस न ले जावां ला
ग्यारस तो म्हारे नीरजला ग्यारस,
बारस न ले जावां ला।
बारस तो म्हारे बछ बारस,
तेरस न ले जावां ला।
तेरस तो म्हारे धन तेरस
चौदस न ले जावां ला।
चौदस तो म्हारे रूप चौदस
मावस न ले जावां ला।
मावस न तो आई दिवाली,
ब्याई जी वाली न लेर आवाँ ला।
रंग मांड जावाँला,
जाता तो करता हेलो पाड़ जावाँ ला॥

(६)

आ तो नाथूराम जी वालाँ री घोरडी ए
आ तो राम स्वामीयाँ रे जाय
जाति सुधार मन मोहनी ए।
तू तो पाची तो गिर मारी घोरडी ए,
थारा टाबरिया विलखा होय।

जाति सुधार मनमोहनी ए।
गौरी जी लड्डू संहारूँ सटवा सूंठरा ओ
गौरी जी आधो तो म्हानै ही चखाय,
जाति सुधार मनमोहनी ए।
पिवजी तोड़ूं तो दूखे म्हारी आंगली ओ,
पिवजी आखो मांसू दियो नहीं जाय।
जाति सुधार मनमोहनी ए।
गौरी जी पीलो बंधाऊ नानी बूंद रो ओ
गोरी जी पीले रे लप्पो दिराय।
जाति सुधार मनमोहनी ए।
मैं तो पाछी तो नहीं आऊं सायब ओ,
मैं तो जाऊंला सगारी साथ।
जाति सुधार मनमोहनी ए।

(७)

ब्याईजी वाली ने लेग्यो रे मींडको
क्यू बेटा बजाज का धण ने जाता देखी हो
म्हारा तो सौगन म्हारी साड़ी चून्दड़ रा सौगन
धण ने लेग्यो रे भींडको
क्यूं रे बेटा हलवाई का धण ने जातो देखी हो
म्हारी तो सौगन घेवर री सौगन
धण ने लेग्यो रे मींडको।

(८)

ब्याईजी वाली होय नखराली
तो आज री मीजमानी म्हारी मानिनी
नेह लगायर नट गई कामणी।
माथो जी खोल र धण माथो जी नहायो

हां जी वा तो जड़यो बोर गुथावणी
महलां में आय नट गई कामणीं
पति जी पास र बा तो माँग सवारी है
वा तो जुल्फाँ जुलम करावणी
सेजा में आयर नट गई कामणी
अतलस की घण अंगिया जी परी
हां जी वा तो नौरंग गैंद गुदावणी
सेजा में आयर नट गई कामणी
हाथाँ जी मेंहदी थारा जी सेंदी
हाँ जी बा तो भालो देर बुलावणी ।

(६)

ब्याईजी वालां ने अरज हमारी अंग्रेजो आवे
पढ़ अंग्रेजी रेजी नाख दीनी दूर
पहरो बढ़िया मलमल जोवन दीखे भरपूर
लाज सरम सब हटाई घर घर के माई । टेर ।
छाछ पीवो छोड़ दियो चाय प्याला माई
वगलबन्दी छिप गई अेन्ट पेन्ट माई
अब मफलर कालर वे लगाई उपर नेकटाई ॥ टेर ॥
दाडी मूछ खोय दीनी बाल राख लीना
अचकन अंगरखी दुपट्टा सारा नाख दिया
आ राम शरम दूर हटाई करता गुडबाई ॥ टेर ॥
जन्टरमेनी सीख सारा हुआ अँगरेज
माथा ऊपर टोप टोपी रोवे रंगरेज
अब चलने की शक्ति नहीं साइकिल मंगवाई ॥ टेर ॥

(१०)

थे तो सुणजो जी सरदार हेलो पाड़ जाऊ ला
मैं तो बजाजी रा हाट सगी जीन लैर बैठूंला
मैं तो साड़ी ये पेरायी सगी संग भाग जाऊंला
मैं तो ब्याइजी वाली ने लेर भाग जाऊंला
मैं तो हलवाई री हाट में ले बैठ जाऊंला
मैं तो घेवर ये खुवाय सगी संग भाग जाऊंला

(११)

ब्याईजी वाली होये नखराला
गोरी जंघा की सिलवट चाल रह्यो बिछुड़ो :
हाय मरी रे राम सगीजी ने खाय गयो बिछुड़ो ।
कांटा परो कीलफां परो शीशफूल पर चल रह्यो बिछुड़ो ।
हाय मरी रे राम सगीजी ने खा गयो बिछुड़ो ।

(१२)

थे तो ओढ़ोनी सुहागिन, पतिव्रत धर्म की चूदड़ी ।
सुरमा शीलव्रत को सारो, मिश्री मीठा वचन उचारो ।
टीकी पर उपकार विचारो पति की सेवा करो हरबार--सुहाग की
चूंपा चतुराई की पहरो, लाज रूपी नथ से सोहे चेहरो ।
लाज दया धर्म को पहनो, झेला झूंठ कभी मत बोलो—जीव
हृदय हार ज्ञान को पहनो, माला धीरजता को गहनो ।
टूस्सी मान बड़ा को कहनो, तिगुनों सास ससुर को जानों
चूड़ो लुलताई को पहनो, पूंजी दया धर्म पर देनों ।
घर में सबसे हिलमिल रहनों, गजरो सबको मानों कहनों
कंठी कड़वा बचन मत बोलो, पायल पाँव में छोड़ो ।
सांकल्या शान्त सदा ही रहनों, कीर्ति रूपी बिछुआ बाजे—सदा ही

वधू की विदा–

विवाह के तीसरे दिन (आजकल दूसरे दिन हो) वधू की 'सिरगूंथी' और पहरावणी सम्पन्न होती है। सिरगूंथी जनवासे में होती है। वधू को जनवासे में ले जाकर उसकी चोटी गूंथकर बोर या टीका बांधा जाता है। वैश्य समाज में इस समय वर आकर वधू की सिन्दूर से मांग भरता है। साथ ही फिर वधू की गोद भरी जाती है तथा वर व वधू मन्दिर जाते हैं।

पहरावनी कन्यापक्ष के घर पर ही होती है। वर के पिता को भेंट पूजा दी जाती है। बरातियों को पहरावनी स्वरूप कुछ मुद्रायें प्रदान की जाती हैं। उधर अन्तःपुर में स्त्रियां मंगलाचार की प्रथा पूरी करती हैं।

१. वर-वधू को नवीन सजें हुये पलग पर बिठाया जाता है।

२. उसके निकट डायजा (दहज) का सामान रखा जाता है।

३. कन्यापक्ष की स्त्रियां वर-वधु को तिलक लगा कर उन्हें कुछ राशि प्रदान करती है।

४. पलंग को जोड़े सहित परिक्रमा करके भेंट प्रदान की जाती है।

५. सास श्वसुर का वर पल्ला पकड़ लेता है और किसी वस्तु की याचना करता है। जब तक वर उचित आश्वासन नहीं पाता पल्ला नहीं छोड़ता।

मंगलाचार की प्रथा समाप्त होने पर वर के साथ वधू को विदा कर दिया जाता है। स्त्रियां जनवासे तक वधू के साथ

जाती हैं। कन्या की विदा का दृश्य बड़ा ही करुणाजनक होता है। वधू अपने समस्त परिजनों को छोड़कर, केवल शैशव की स्मृतियों को साथ लेकर जब अनजान घर में जाने लगती है तब वह दुविधा संकोच होता है तथा उसे स्नेहियों का वियोग अखरता है। वधू का करुण रुदन फूट पड़ता है। जब वह विदा गीत की पहली पंक्ति—'ए छोड़ बाबा सा रो हेत कोयल बाई सिध चाली'

सुनती है, अन्य स्त्रियाँ सिसकियां भरे स्वरों में गीत गाती हुई अपने-अपने आँचल से आँसुओं की प्रजल्य धारा को रोकती हुई आगे बढ़ती रहती है। माँ अश्रुपूरित नयनों सहित पुत्री को आशीर्वाद और अनेक प्रकार की सीख देती है। इस प्रकार बिदा का अन्तिम दृश्य उपस्थित होता है जब वधू किसी 'माँ की आँख का तारा' वर के साथ प्रस्थान कर जाती है हर्ष और विषाद, संयोग और वियोग की समन्वयात्मक भूमि पर वधू का हृदय वेग से धड़कता रहता है। जीवन का यह संयोग भी कितना आकर्षक और अनुपम प्रभावशाली है जो अपने होते हैं वे छूट जाते हैं और पराये अपने बन जाते हैं। जीवन की गति विचित्र है और उससे भी विचित्र है जीवन की वह अनबूझ कहानी जो अपने नयन डोरों पर भावी के कटाक्षों को बाँधा करती है, समेटा और सँवारा करती है। जीवन में मोह माया ममता नारी के स्नेह और विश्वास को पाकर चेतनता की भावभूमि पर संजीवन शक्ति की विशालता का बोधक बनता है। नारी और पुरुष का यह संयोग प्रकृति और पुरुष का मिलन है और सृष्टि संचालन का कर्मरत चक्र।

विदा गीत—

(१)

ओलूं

मैं थाने पूछां म्हारी जीवड़ी
म्हें थाने पूछां म्हारी बालकी
इतरो बाबाजी रो लाड छोड़कर बाई सिध चाल्या ।
म्हें रमती बाबासा री पोल
आयो सगैजी रो सूवटो, गायड़मल ले चाल्यो ।
म्हें थांने पूछां म्हारी जीवड़ी
म्हें थाने पूछां म्हारा बालकी
इतरो मारुजी रो लाड़ छोड़ बाई सिव चाल्या ।
आयो सगैजी रो सूवटो
ओ लेग्यो टोली मां सूं टाल फूटरमल ले चाल्यो ।
म्हें थाने पूछां म्हारी बेहणी
म्हें थाने पूछां म्हारा बाईसा
इतरो वीरो जी रो हेत छोड़ बाई सिव चाल्या ।
हे आयो परदेशी सूवटो
म्हे तो रमती सहेलियां रे साथ जोड़ी रा जालम ले चल्या ।

(२)

एक बार करला मारा मारूजी पाछा जी मोण ।
राजीदा ढोला ओलूं आवे म्हारे बाबो सारी ।
सुन्दर गोरी ओलूं थारी पड़ी रे निवार
चम्पक वरणी बाबोसी री ओलूं सुसरोजी मांगसी ।
एक बार ओ मारूजी करला जी पाछो मोड़
राजीदा ढोला ओलूं घणी आवे म्हारे मांयरी ।

सुन्दर गोरी ओलूं थारी परी रे निवार ।
मृगानयनी मारुजी री ओलूं सासूजी माँगसी ।
एक बार ओ मारूजी करला जी पाछो मोड़
राजीदा रा ढोला ओलूं घणी आवे म्हारे वीर री ।
सुन्दर धण तू ओंलूं थारी पड़ी रे निवार ।
चम्पक वरणी वीर तोरी ओलूं देवर मांगसी ।

(३)

वनखंड की ए कोयल, वन खंड छोड़ कठै चली
थारी आले-दीवाले गुडियाँ धरीं
वन खंड की ए कोयल, वन खण्ड छोड़ कठै चली
थारी सहेल्याँ साथ अनमनी
वन खंड की ए कोयल वन खण्ड छोड़ कठै चली ।
थारी माऊजी थारे बिन उनामणा
थारी छोटी बैनड़ रोवै अकेलड़ी
वन खंड की ये कोयल, वनखड छोड़ कठै चली
थारो वीरो सा फिरे ये उदास
बिलखत थारी भावजड़ी
वन खंड की ये कोयल, वन खंड छोड़ कठै चली
थारो बाबो सा फिरै यै उदास
माऊजी थारी बिलख रही
वन खंड की ये कोयल, वन खण्ड छोड कठै चली ।

वधू का वर के घर पहुंचना—

नाई वर-वधू के आगमन का समाचार लेकर वर की माता के यहाँ बधाई देता हुआ सुनाता है। बारात आगमन के एक दिन पूर्व ही वर का घर मांडणों से मंडित किया जाता

है। बान्दरवाल बांधी जाती है। पगल्या चित्रित किये जाते हैं। सब स्त्रियों के हाथों में मेंहदी मांडी जाती है। वर-वधू के आगमन पर समस्त स्त्रियां एकत्र होकर ढोल ढमाके के साथ बधावे गाती हुई नव दम्पति को सामें लेने जाती हैं और वर-वधू को लेकर घर पर आती हैं। यहां द्वार पर माता दोनों की आरती करती है तथा उन्हें 'पुखती' है। आगे बढ़ने पर वर की बहन व भुआ बारणा रुकाई लेती है। वे मार्ग रोककर खड़ी हो जाती हैं। तथा 'नेग' लेकर फिर मार्ग देती हैं। उसी समय एक स्त्री विनायक के 'माया गेह' की देहरी तक 'पसरक' मांडती है--

१. कांसी की एक कटोरी में।

२. सात कांसी की थाली, मेवा मूंग पैसा रख दिया जाता है।

३. वर को हाथ में छड़ी दी जाती है जिससे वह थालियों को आगे पीछे कर देता है। वधू उन थालियों को उठाती है 'निःशब्द'।

४. वर की मां झोली फैलाकर बैठ जाती है वधू उसकी गोद में सब रख देती हैं।

रात्रि को 'रातिजगा' और सुहागरात की अनुपम घड़ी आती है। नीचे स्त्रियाँ 'रातिजगा' में बैठ जाती हैं। उधर वर वधू माया के गेह में परिचय प्राप्त करते हैं और सुहाग रात की पावन घड़ी में अपने जीवन को रसलिप्त करके सुख की प्राप्ति करते हैं। सुहागरात भारतीय वैवाहिक जीवन का अनुपम आनन्दमय अंग है जिससे रात्रि में ही दोनों हृदय मिलकर एक हो जाते हैं और जीवन क्षेत्र में प्रवेश करके एक दूसरे के साथी

बन जाते हैं। सुहागरात वर के लिये प्रेम मिलन की मान मनवार की मंजुल मन मोहक सुखरात्रि है।

सुहाग थाल—

सुहागरात के दूसरे दिन प्रातःकाल देवी देवताओं को पूज कंकण डोरडे आदि का परिवर्तन करके सुहाग थाल का आयोजन सम्पन्न किया जाता है।

१. वर-वधू को एक साथ पर बैठाया जाता है।

२. दोनों एक दूसरे के मुंह में ग्रास देते हैं।

३. स्त्रियाँ हाथ में रुपया लेकर वर-वधू को ग्रास देती हैं।

४. सुहाग थाल में मीठे चावल या लपसी चावल ही बनाये जाते हैं।

५. वधू की मुंह दिखाई होती है। मुंह देखकर उसे भेंट दी जाती है।

इस प्रकार सुहाग थाल की रस्म पूर्ण होने पर सब कार्य विधिवत् शनैः शनैः समाप्त हो जाते हैं। देवी देवताओं का विसर्जन माया के गेह में शुभ दिन पर किया जाता है। अतिथियों को सादर विदा किया जाता है। सब अभ्यागत अतिथि वर वधू को आशीर्वाद देकर भावी जीवन के प्रति शुभ मंगल कामनाएं समर्पित करते हुए विदा होते हैं।



परिशिष्ट

वैदिक वधू

सूर्या का विवाह हुआ पूरे सांस्कृतिक वातावरण में—रैभी नामक ऋचाएँ उसकी सखी बनीं। नराशंसी ऋचाएँ उसकी दासी हुईं और उसका सुन्दर वस्त्र साम गान द्वारा परिष्कृत हुआ। वह पतिगृह में जाने लगी तब चैतन्य स्वरूप उसका चादर था। नेत्रों की शोभा ही उसका उबनट था और द्यावा पृथिवी ही उसके कोश थे स्तोत्र ही उसके रथचक्र के डंडे थे। कुरीर नामक छन्द रथ का भीतरी भाग था। सूर्या के वर अश्विनी कुमार थे और अग्नि अग्रगामी दूत। सूर्या मन ही मन पति की कामना कर रही थी। वह पति के गृह में गई। उसका मन ही शकट था, आकाश ही ओढ़ना था और सूर्य-चन्द्रमा उसके रथवाहक हुए। ऋक्साम द्वारा वर्णित दो वृषभ रूप सूर्य चन्द्रमा उसके शकट को यहाँ से वहाँ ले जाने वाले हुए। सूर्या के दोनों कान उसके दो रथचक्र हुए। रथ के चलने का मार्ग हुआ आकाश। जाने के समय रथ के पहिए अत्यन्त उज्ज्वल थे। रथ में अक्ष (डंडा) जुड़ा हुआ था। वह पतिगृह में जाने के लिए मन रूपी शकट पर चढ़ी। उस समय सूर्य ने उसे चाद दिरया था वह आगे आगे चला। माघनक्षत्र के उदयकाल में चादर (उपढौकन) के रूप में प्रदत्त गायों को डंडे से हांका जाता है और फाल्गुनी नक्षत्र में उस चादर को रथ से ले जाया जाता है। पलाश और शाल्मली वृक्ष से निर्मित सुन्दर रथ से सूर्या पतिगृह को चली। वह पिता सूर्य और वरुण के बंधनों से मुक्त होकर चली और जहाँ सत्कर्म का निवास है उस स्थान पर पति के साथ प्रतिष्ठित हुई। वह पितृगृह से मुक्त होकर भर्तृगृह में प्रतिष्ठित हुई। (ऋ. १०।८५)

सूर्या के वर अश्विनी कुमार तीन पहिए के रथ पर चढ़कर विवाह करने पहुँचे। सारे देवों ने उनके इस निश्चय का समर्थन किया। सूर्या का वरण करते समय समयानुसार चलने वाले सूर्य-चन्द्र उनके रथचक्र थे एक तीसरा गोपनीय चक्र था जिसे विद्वान् जानते हैं। अश्विनीकुमार सूर्या तथा अन्य प्राणियों के शुभचिन्तक हैं। सूर्य प्रतिदिन उनके लिए यज्ञभाग की व्यवस्था करने लगा। चन्द्रमा उन्हें चिरजीवन देने वाला हुआ। वह मार्ग कंटकविहीन था जिससे इनके मित्र कन्या के पिता के पास (बारात के रूप में) गये। अश्विनीकुमार रथ से सूर्या को अपने घर लाते हैं। घर में उसे गृहिणी का पद देते हैं। उसे घर की व्यवस्था आदि का काम सौंपते हैं। वृद्धावस्था तक घर की प्रभुता करने का अधिकार देते हैं। वे पत्नी से मलिन वस्त्र त्यागने के लिए कहते हैं। वे ब्राह्मणों को धन देते हैं और सब प्रकार की आशंकाओं या दुर्भावनाओं से मुक्त होकर संयुक्तरूप से दाम्पत्य जीवन बिताने का संकल्प करते हैं। वे कभी पत्नी के वस्त्रों से अपना शरीर ढकने की चेष्टा नहीं करते क्योंकि इससे उनका उज्ज्वल शरीर भी श्रीभ्रष्ट हो जाता है। अश्विनी कुमार कहते हैं—

गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः।
भगो अर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्य त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः॥

(तुम्हारे सौभाग्य के लिए तुम्हारा हाथ पकड़ा है। मुझे पति रूप में पाकर तुमको वृद्धावस्था तक पहुँचना है। भग, अर्यमा और पूषा ने तुम्हें गृहधर्म चलाने के लिए मुझको दिया है।)

वह प्रार्थना करता है—

समजन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ।
सं मातरिश्वा सन्धाता समु देष्ट्री दधातु नौ॥

(सारे देवता हम दोनों के हृदयों को मिलावें। जल, वायु, धरती और सरस्वती हम दोनों को संयुक्त करें।) (ऋ. १०।८५)

घर और व्यवहार

स्त्री को गृहिणी माना गया है। 'गृहिणी गृह उच्यते'। स्त्री और घर को एक रूप माना गया है। स्त्री तथा घर के सभी मनुष्य परस्पर किस प्रकार व्यवहार करते हैं यही दाम्पत्य जीवन का आधार है। दाम्पत्य जीवन के निर्वाह के लिए घर की महती आवश्यकता है घर को आदर्श रूप बनाने के लिए दम्पती का परस्पर व्यवहार भी आदर्श होना चाहिए। वेद मंत्रों के आदेशानुसार घर बहुत ही सादे होने चाहिए—अथर्ववेद में लिखा है कि—

ऊर्जस्वती पयस्वती पृथिव्यां निमिता मिता।
विश्वान्नं बिभ्रती शाले मा हिंसीः प्रतिगृह्णतः। (अथर्व. ९।३।१६)
तृणैरावृत्ता पलदान् वसाना रात्रीव शाला जगतो निवेशनी।
मिता पृथिव्यां तिष्ठसि हस्तिनीव पद्वती। अथर्व. ९/३/१७)

अथर्ववेद के मंत्रों के अनुसार गृहस्थ को किसी से विरोध नहीं करना चाहिए। गृहस्थाश्रम में रहकर पूर्ण आयु प्राप्त करे तथा पुत्र और पौत्रों के साथ खेलते हुए तथा आनन्द करते हुए अपने ही घर में रहे और घर को आदर्श रूप बनाये।

अब यह देखना है कि घर कैसा हो? घर वही उत्तम है जिसमें सद्गृहिणियां निवास करती हों। जिसमें गृहिणियों को अपनी गृहस्थी चलाने के लिए समस्त खाद्य और पेय पदार्थों को तैयार करने की सामग्री उपलब्ध हो। अथर्ववेद के एक मत्र के अनुसार स्त्री को यह कहा गया है कि हे स्त्री! तू दूध और घी को घड़ों में भरकर उनकी धारा से इन पीने वालों को तृप्त कर और वापी कूप तडाग तथा दान आदि सब प्रकारों से इनकी रक्षा कर।

वैदिक मंत्रों के अनुसार घरों में देव, ऋषि और पितरों की तृप्ति के लिए घी, दूध और फलों का विशाल आयोजन होना चाहिए तथा गृहस्थ को अपने इष्टमित्रों, अतिथियों और क्षुधापीडित मनुष्यों को अन्न, जल और सेवा

से तृप्त करना चाहिए। वेदमंत्रों में अतिथि सत्कार न करने वाले और क्षुधातुरों को अन्न न देने वाले गृहस्थों की निंदा की गई है।

घर को व्यवस्थित बनाये रखने के लिए गृहस्थ को चाहिए कि वह उतना ही खर्च करे जितनी उसकी आमदनी हो। स्त्री के बिना घर को भूतों का डेरा कहा गया है। अतः स्त्री ही घर को चलाने में सक्षम होती है। दाम्पत्य जीवन को सुखमय बनाने के लिए घर और व्यवहार दोनों ही अच्छे होने चाहिएँ। गृहस्थ आयु, बल कीर्ति, विद्या, धन और मोक्ष आदि इच्छाओं की प्राप्ति तभी कर सकता है जबकि उसका व्यवहार उत्तम हों। ऋग्वेद में दाम्पत्य प्रेम का वर्णन करते हुए लिखा है कि—

या दम्पती समनसा सुनुत आ च धावतः।
देवासो नित्ययाशिरा ॥ (ऋग्वेद ८।३१।५

स्योनाद्योनेरधि बुध्यमानो हसामुदौ महसा मोदमानौ।
सुगु सुपुत्रो सुगृहो तराथो जीवावुषसो विभातीः॥ (अथर्व. १४।२।४३)

घर के सभी व्यक्ति परस्पर प्रेम और विनोद के साथ व्यवहार करें। कौटुंबिक व्यवहार का निम्न मंत्र में कैसा सुन्दर वर्णन है—

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम् ॥
मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया ॥ (अथर्व. ३।३०)

घर से सम्बन्ध रखने वाले अन्य जाति-बन्धुओं के सुख के लिए गृहस्थी को किस प्रकार की कामना करनी चाहिए--इसका भी वेद में उपदेश किया है— माता, पिता, जाति वाले, नौकर, चाकर और कुत्ते आदि सब सुख से सोवें। आत्मीय जन, पिता, पुत्र, पौत्र, पितामह, स्त्री, पितामही, माता और जो स्नेही हैं, उनको मैं आदर से बुलाता हूँ। जाति से सम्बन्ध रख ने वालों के साथ,ही मित्रों के साथ भी गृहस्थ का व्यवहार अच्छा होना चाहिए।

मनुष्य को अपने सुहृद जनों व समस्त प्राणियों से प्रेम, दया, समता, सहानुभूति और मित्रता का व्यवहार करना चाहिए। घर को सुदृढ़ बनाने के लिए पति पत्नी को व्यवहार कुशल होना चाहिए। ❀

दाम्पत्य जीवन के लिए मंगल कामनाएँ

'सुयममस्तु' अर्थात् पतिपत्नी मिलकर रहें—सब इष्टमित्र इस कामना के साथ विवाह में सम्मिलित होते हैं। सब प्रार्थना करते हैं कि वधू सौभाग्यवती और सुपुत्रवती हो। एक वैदिक मंत्र में कल्याणी वधू को आशीर्वाद देने का उल्लेख है—

सुमंगलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत।
सौभाग्यमस्यै दत्त्वायाथास्तं वि परेतन ।। (ऋ. १०/८५/३३)

(सब आवें और इस शोभन कल्याण वाली वधू को देखें तथा स्वामी की प्रियपात्री बनने का आशीर्वाद देकर अपने अपने घर लौट जायें)

सबकी कामना है कि अग्नि ने सौन्दर्य और परमायु के साथ पत्नी पति को दी है। इसका पति दीर्घायु होकर सौ वर्ष तक जीवित रहे। एक अन्य मंत्र में आशीर्वाद है—

f

इहैव स्तं मा व यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम्।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे ।।

(वर-वधू ! तुम दोनों इस घर में रहो। परस्पर पृथक् मत होना। नाना खाद्य भक्षण करना। अपने घर में पुत्र-पौत्रों के साथ आमोद, आह्लाद और क्रीडा करना)।

पति पत्नी को ब्रह्मा या प्रजापति सन्तान प्रदान करते हैं और अर्यमा वृद्धावस्था तक उन्हें साथ रखता है। वधू को वेद का आदेश है कि वह मंगलमयी होकर पतिगृह में रहे तथा मनुष्यों और पशुओं के कल्याण की सृष्टि करे।

अदुर्मंगली: पतिलोकमा विश शन्नो भव द्विप दंशं चतुष्पदे ॥

वेदमंत्रों में पति और पत्नी के दाम्पत्य जीवन को इन शब्दों में व्यक्त किया गया है—

पत्नी निर्दोष नेत्रवाली बने, पति के लिए मंगलमयी होवे, पशुओं के लिए मंगलकारिणी होवे। उसका मन प्रफुल्ल होवे और सौन्दर्य शुभ्र हो। वह वीरप्रसविनी और देवों की भक्त बने। सबके लिए कल्याण की सृष्टि करे। इन्द्र उसे उत्तम पुत्रवाली और सौभाग्यशालिनी बनाये। उसके गर्भ से पति के समान तेजस्वी पुत्र और दस पुत्रों के समान एक कन्या पैदा हो। यह भी कामना है कि वह सास, ससुर, ननद और देवरों की सम्राज्ञी बने—

सम्राज्ञी श्वसुरे भव, सम्राज्ञी श्वश्र्वां भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु ॥ (ऋ. १०/८५/४६)



